अनातोली
तमीलिन
पृथ्वी के रूप का पता कैसे चला?
चित्रकार: यूरी स्मोल्निकोव
अनुवादक: योगेन्द्र नागपाल
रादुगा प्रकाशन
मास्को
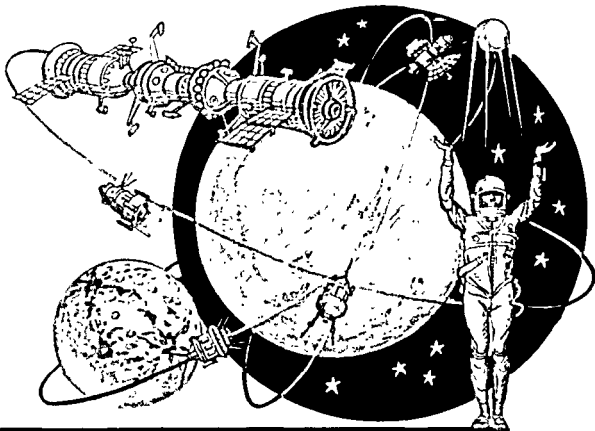
पृथ्वी का रूप कैसा है?

पृथ्वी का रूप कैसा है? – अजीब सवाल है न? हर कोई जानता है कि पृथ्वी गोल है।

हम बीसवीं सदी के लोगों के लिए पृथ्वी का गोल आकार ऐसी ही स्वाभाविक बात है, जैसे कि आकाश का नीला रंग, घास और पत्तियों का हरा रंग। ऐसा इसलिए है कि बचपन से ही हम हर किसी के मुंह से सुनते हैं "पृथ्वी गोल है!" लेकिन क्या यह बात इतनी स्वतःस्पष्ट है?

बाहर खेतों में जाओ। इतनी दूर निकल जाओ कि चारों ओर क्षितिज से क्षितिज तक घास-पात और रंग-बिरंगी पंखुड़ियोंवाले फूल ही फूल हों। अब इधर-उधर नजर दौड़ाओ – क्या दिखा? क्या पृथ्वी गोले जैसी उभारदार है? नहीं तो! कहीं गोले जैसा कोई उभार नहीं नजर आता। क्षितिज तक सपाट जमीन ही फैली हुई है। उस पर हर टीला, हर झाड़ी और हरेक पेड़ दिखाई देता है। तो यह किसने कहा कि पृथ्वी गोल है?

जब कम्प्यूटरों ने कृत्रिम भू-उपग्रहों से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार धरातल का हिसाब लगाया तो पता चला कि हमारे ग्रह की आकृति जटिल है – कुछ-कुछ नाशपाती जैसी। उत्तरी गोलार्ध

ध्रुव के पास थोड़ा लंबा खिंचा हुआ है और दक्षिणी गोलार्ध चपटा-सा। धरातल पर पिचक
है और उभार भी। यही नही यदि भूमध्यरेखा पर पृथ्वी को दो भागों में काटा जाये, तो इ
काट पर भी बिल्कुल सही वृत्त नहीं बनेगा, बल्कि वह थोड़ा लंबा खिंचा होगा। वाकई "नाा
पाती" है, सो भी ऊबड़-खाबड़। तो ऐसी आकृति का क्या नाम रखा जाये?

वैज्ञानिक बड़ी देर तक सोचते रहे, कई नामों पर उन्होंने विचार किया और अंततः यह त
किया कि पृथ्वी के रूप को भू-आभ कहेंगे। यानी पृथ्वी पृथ्वी जैसी ही है। सो, पृथ्वी हमारे
गोल तो है, लेकिन पूरी तरह से नहीं। लोगों ने पृथ्वी के रूप का पता कैसे लगाया – यह किस्स
काफ़ी लंबा है और बड़ा दिलचस्प भी। इसी के बारे में मैं तुम्हें इस पुस्तक में बताऊंगा।

अध्याय एक

सारी पृथ्वी – मेरा घर

दसियों लाख साल पहले पृथ्वी पर पहले मानव प्रकट हुए थे। दस लाख बहुत बड़ी संख्या है। यदि तुम एक सेकंड में एक अंक बोलो तो दस लाख तक गिनने के लिए तुम्हें रात-दिन, खाने-पीने, पढ़ाई और आराम करने के लिए रुके बिना ठीक ग्यारह दिन, तेरह घटे, छयालीस मिनट और चालीस सेकंड तक गिनती गिननी होगी।

शुरू-शुरू में पृथ्वी पर लोग बहुत थोड़े-से थे। वनों-मैदानों के दूसरे निवासियों के सम्मुख वे असहाय लगते थे। मनुष्य के पास हिंसक जतुओं से अपनी रक्षा करने और अपने लिए आहार पाने के वास्ते मजबूत नाखून और तेज दात नही थे। पाले से बचने के लिए उसके शरीर पर घने, गरम रोयें नहीं थे। बाढ़ से बच भागने या जंगल की आग – दावानल – से बचकर उड़ भागने के लिए उसके पास मजबूत टांगें या पंख नही थे। उसके पास बस थोड़ी-सी बुद्धि थी और अनुभव संचय करने की क्षमता थी।

पृथ्वी पर पहले लोगों का जीवन कठिनाइयों से भरा था। भोजन पाना ही बहुत बड़ी समस्या थी। औरतें सारा-सारा दिन कंद-मूल बटोरती रहती थी और मर्द मछली या कोई जानवर पकड़ने की कोशिश करते थे। उन दिनों लोग गोत्रों मे रहते थे, यानी बहुत बड़े परिवार में – माता-पिता, बच्चे, दादा-दादी, नाना-नानी, मामा-मामी, चाचा-चाची, भतीजे-भानजे। सब एक दूसरे के संबंधी होते थे। शाम तक वे खाने-पीने की तरह-तरह की चीजें जमा कर लेते और उस गुफ़ा में ले जाते जहां वे रहते होते। वहां अलाव के पास खाना बांटते और खाते। सुबह तड़के फिर से वही क्रम शुरू होता। ऐसे में दिन बीत जाये वही बहुत अच्छा है, कल की कल देखी जायेगी।

धीरे-धीरे आदिम मानव ने श्रम और शिकार के औज़ार बनाने सीखे और बड़ी देर तक वह पत्थर, लकड़ी और हड्डी के ही औज़ार बनाता रहा। पत्थर की कुल्हाड़ी या चाकू बना पाना कोई आसान काम नही था। इसके लायक पत्थर का टुकड़ा ढूंढने में ही कितना समय गंवाना
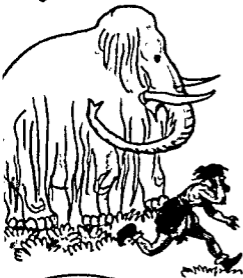
होता था। इसके लिए अपने डेरे से दूर तक जाना पड़ता था। हां, बहुत दूर नहीं, ताकि रास्ता न भूल जायें। लोग दर्रों में जाते थे, जहां तेज़ जल धाराएं चट्टानों से टूटे टुकड़ों को घिस-घिसकर गोल कंकड़ बनाती थीं। समुद्र किनारे, पथरीले तटों पर भी लोग अपने काम के पत्थर ढूंढ़ते थे।

समय-समय पर आदिम लोगों को पत्थरों के बीच कुछ विशेष पत्थर भी मिलते थे—ये टूटते नहीं थे, लेकिन पिचक जाते थे। इन्हें दो बड़े पत्थरों के बीच देर तक कूटते रहने पर ऐसे कुछ पत्थरों से चाकू के लिए पतला पत्तर बन जाता था, या कुल्हाड़ी के लिए मोटा फलक। इन औज़ारों की धार तेज़ की जा सकती थी।

तुम समझ गये होगे कि ये धातु पिंड थे—तांबे और सोने के, कभी-कभी लोगों को चांदी भी मिल जाती थी।

इस तरह सदियों के बाद सदियां और सहस्राब्दियों के बाद सहस्राब्दियां बीतती गयीं। आदिम मानवों का जीवन बहुत धीरे-धीरे बदलता था। उन दिनों कोई यह सोचता भी नहीं था कि पृथ्वी कितनी बड़ी है। चारों ओर सभी कुछ विशाल लगता था। नदियां और झीलें अपार थीं। आदिम लोगों के पास नावें जो नहीं थीं। मैदान, जंगल और पहाड़ असीम लगते थे, क्योंकि लोगों ने अभी कोई सवारी नहीं खोजी थी। बीहड़ रास्ते पर पैदल भला कितनी दूर जाया जा सकता है? डर भी तो लगता है! जंगलों-मैदानों में रक्तपिपासु जंतु रहते हैं। झीलों, सागरों-महासागरों में हिंसक मछलियां हैं। हर कोई पथिक को हड़प जाने की ताक में रहता है। हड़पेंगे नहीं तो भी डरा तो डालेंगे। उन दिनों दूर की यात्राओं की बातें कोई सोचता तक नहीं था। सो आदिम लोगों का यही खयाल होता था कि उनका डेरा और उसके आस-पास जो कुछ है वही सारी पृथ्वी है।

वैज्ञानिकों का मत है कि सबसे पहले मनुष्य अफ़्रीका, एशिया और यूरोप के इलाक़ों में प्रकट हुआ। इन इलाकों में ही आदिम मानव की अस्थियों और उसके अनघड़ औज़ारों के सबसे पुराने अवशेष मिले हैं। अमरीका महाद्वीप और आस्ट्रेलिया में ऐसी खोजें नही हुई है। क्या इसका अर्थ यह नही है कि लोग कालातर में वहां जा बसे? लेकिन लोग नये स्थानों पर क्यों जाते थे? वे अपना जन्म-स्थल क्यों छोड़ते थे? और सागर का विस्तार वे कैसे पार करते थे?

पता चला है कि ऐसे देशांतरण के कई कारण थे। सबसे बड़ा कारण था कि लोग भुखमरी से बचने का उपाय खोजते थे। आदिम शिकारी वन्य जीवों के झुंडों के पीछे-पीछे चलते थे। जहां वे जीव जाते, वही शिकारी भी। कुछ गोत्रों को अपने अत्यंत लड़ाकू पड़ोसियों से बचने के लिए भागना पड़ता था। ऐसे भी होता था कि स्वयं पृथ्वी जीव-जंतुओं और लोगों को उन स्थानो से भगाती थी, जहां वे रहते आये थे।

हमारे ग्रह के इतिहास में वैज्ञानिको ने अनेक ऐसे युगों का पता लगाया है जबकि उष्म जलवायु का स्थान शीत ले लेता था, और उसके बाद फिर से जलवायु उष्म होने लगती थी। ऐसा क्यों होता था – यह बताना कठिन है। प्रायः ऐसा तभी होता था जब भूगर्भ मे प्रबल शक्तियां जाग उठती थी। भयंकर भूकंपों से पृथ्वी दहल उठती। धरातल पर परतें पड़ जाती। नये पर्वत उभरते, ज्वालामुखी धुआं छोड़ते और पृथ्वी पर गहरी दरारें पड़ जाती। जाग उठे ज्वालामुखी वायुमण्डल में इतनी राख फेंकते कि वायु पारदर्शी न रहती। सूरज लंबे अरसे के लिए काली घटाओं के पीछे छिप जाता और पृथ्वी ठंडी पड़ने लगती...

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि समय-समय पर स्वयं सूर्य का ही तेज मंद पड़ जाता था और पृथ्वी को उससे पहले से कम उष्मा मिलने लगती थी। जो भी हो, ऐसे युगों में ही ऊंचे स्थलों पर हिमनद बनने लगते थे। महा-सागरों से वाष्पित होनेवाला जल हिम बनकर पृथ्वी पर

होता था। इसके लिए अपने डेरे से दूर तक जाना पड़ता था। हां, बहुत दूर नहीं, ताकि रास्ता न भूल जायें। लोग दर्रों में जाते थे, जहां तेज जल धाराएं चट्टानों से टूटे टुकड़ों को घिस-घिसकर गोल कंकड़ बनाती थीं। समुद्र किनारे, पथरीले तटों पर भी लोग अपने काम के पत्थर ढूंढ़ते थे।

समय-समय पर आदिम लोगों को पत्थरों के बीच कुछ विशेष पत्थर भी मिलते थे—ये टूटते नहीं थे, लेकिन पिचक जाते थे। इन्हें दो बड़े पत्थरों के बीच देर तक कूटने रहने पर ऐसे कुछ पत्थरों से चाकू के लिए पतला पत्तर बन जाता था, या कुल्हाड़ी के लिए मोटा फलक। इन औज़ारों की धार तेज की जा सकती थी।

तुम समझ गये होंगे कि ये धातु पिंड थे—तांबे और सोने के, कभी-कभी लोगों को चांदी भी मिल जाती थी।

इस तरह सदियों के बाद सदियां और सहस्राब्दियों के बाद सहस्राब्दियां बीतती गयीं। आदिम मानवों का जीवन बहुत धीरे-धीरे बदलता था। उन दिनों कोई यह सोचता भी नहीं था कि पृथ्वी कितनी बड़ी है। चारों ओर सभी कुछ विशाल लगता था। नदियां और झीलें अपार थीं। आदिम लोगों के पास नावें जो नहीं थीं। मैदान, जंगल और पहाड़ असीम लगते थे, क्योंकि लोगों ने अभी कोई सवारी नहीं खोजी थी। बीहड़ रास्ते पर पैदल भला कितनी दूर जाया जा सकता है? डर भी तो लगता है! जंगलों-मैदानों में रक्तपिपासु जंतु रहते हैं। झीलों, सागरों-महासागरों में हिंसक मछलियां हैं। हर कोई पथिक को हड़प जाने की ताक में रहता है। हड़पेंगे नहीं तो भी डरा तो डालेंगे। उन दिनों दूर की यात्राओं की बातें कोई सोचता तक नहीं था। सो आदिम लोगों का यही ख़याल होता था कि उनका डेरा और उसके आस-पास जो कुछ है वही सारी पृथ्वी है।

लोग अपना जन्म-स्थल क्यों छोड़ते थे

वैज्ञानिकों का मत है कि सबसे पहले मनुष्य अफ़्रीका, शिया और यूरोप के इलाक़ों में प्रकट हुआ। इन इलाकों हीं आदिम मानव की अस्थियों और उसके अनगढ़ औज़ारों : सबसे पुराने अवशेष मिले हैं। अमरीका महाद्वीप और ास्ट्रेलिया में ऐसी खोजें नहीं हुई हैं। क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि लोग कालांतर में वहां जा बसे? लेकिन लोग नये स्थानों पर क्यों जाते थे? वे अपना जन्म-स्थल क्यों छोड़ते थे? और सागर का विस्तार वे कैसे पार करते थे?

पता चला है कि ऐसे देशातरण के कई कारण थे। सबसे बड़ा कारण था कि लोग भुखमरी से बचने का उपाय खोजते थे। आदिम शिकारी वन्य जीवों के झुंडों के पीछे-पीछे चलते थे। जहां वे जीव जाते, वहीं शिकारी भी। कुछ गोत्रों को अपने अत्यंत लड़ाकू पड़ोसियों से बचने के लिए भागना पड़ता था। ऐसे भी होता था कि स्वय पृथ्वी जीव-जंतुओं और लोगों को उन स्थानों से भगाती थी, जहां वे रहते आये थे।

हमारे ग्रह के इतिहास में वैज्ञानिकों ने अनेक ऐसे युगों का पता लगाया है जबकि उष्म जलवायु का स्थान शीत ले लेता था, और उसके बाद फिर से जलवायु उष्म होने लगती थी। ऐसा क्यों होता था – यह बताना कठिन है। प्रायः ऐसा तभी होता था जब भूगर्भ में प्रबल शक्तियां जाग उठती थीं। भयंकर भूकंपों से पृथ्वी दहल उठती। धरातल पर परतें पड़ जाती। नये पर्वत उभरते, ज्वालामुखी धुआं छोड़ते और पृथ्वी पर गहरी दरारें पड़ जाती। जाग उठे ज्वालामुखी वायुमण्डल में इतनी राख फेंकते कि वायु पारदर्शी न रहती। सूरज लंबे अरसे के लिए काली घटाओं के पीछे छिप जाता और पृथ्वी ठंडी पड़ने लगती ...

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि समय-समय पर स्वयं सूर्य का ही तेज मंद पड़ जाता था और पृथ्वी को उससे पहले से कम उष्मा मिलने लगती थी। जो भी हो, ऐसे युगों में ही ऊंचे स्थलों पर हिमनद बनने लगते थे। महा-सागरों से वाष्पित होनेवाला जल हिम बनकर पृथ्वी पर

गिरता और हरी घाटियों पर हिम की मोटी चादर बिछ जाती। पहाड़ों में हिमनद बढ़ते और भारी होते जाते और महासागरों मे जल कम होता जाता। कहीं-कहीं उथली जगहों पर तला भी दिखाई देने लगता और वह थल बन जाता। संसार के एक भाग से दूसरे तक स्थल-सेतु बन जाते।

वैसे, हम तुम्हे यह भी बता दें कि ऐसे सबसे भयानक हिम युग पृथ्वी पर मनुष्य के प्रकट होने से काफ़ी पहले ही हुए थे। लेकिन मनुष्य को भी ऐसे युग देखने को मिले।

स्वयं अपने भार के प्रभाव से हिमनद पर्वत शिखरों से मैदानों की ओर बढ़ चलते। तृणभक्षी जीव ठंड से बचने के लिए दूर भागते और उनके पीछे-पीछे हिंसक जंतु भी। लोग भी उनके पीछे जाते।

स्थल-सेतुओं के रास्ते पशुओं के झुंड और आदिम शिकारी एशिया से अमरीका महाद्वीप पहुंच सकते थे। दक्षिणी चीन सागर के उभर आये तले और जोंद द्वीपों के रास्ते वे आस्ट्रेलिया पहुंच सकते थे।

हिम युग हज़ारों वर्षों तक चलते थे। लेकिन यह भी चिरकाल नही है! शनैः-शनैः घटाएं घटती, सूरज झांकता और फिर से गर्मी पहुंचाने लगता। उसकी गर्मी से बर्फ़ पिघलने लगती और हिमनद पीछे हटने लगते। खाली हो गयी ज़मीन पर फिर से हरी-हरी घास उगती, वन बनते। घनी चरागाहों में बड़े-बड़े जानवर: मैमथ और बालदार गेंडे, हिरण और घोड़े आते। उनका पीछा करते शिकारी भी अपने पुराने निवास-स्थल छोड़ देते।

उधर सूरज की गरमी बढ़ती जाती। तूफ़ानी नदियां सागरों-महासागरों में मिलतीं। जल का स्तर ऊंचा उठता और स्थल-सेतु डूब जाते। दूर चले गये लोग पीछे रह गये लोगों से सदा के लिए अलग हो जाते।

कई बार जलवायु इस तरह ठंडी और गरम हुई। हर बार ठंड और भुखमरी से बचने के लिए जीव-जंतु और मनुष्य उत्तरी गोलार्ध में दक्षिण को तथा दक्षिणी गोलार्ध में उत्तर को जाते-जहां ठंड कम होती। सब कुछ गतिशील हो जाता-पशु-पक्षी और लोग सभी नये स्थानों पर जा बसते। बहुतों के लिए यह यात्रा असह्य होती वे मारे जाते, लेकिन बहुत से ज़िंदा बचे रहते। ऐसे हर देशांतरण के साथ मनुष्य के जीवन में कुछ नये परिवर्तन आते।

शिकार आहार पाने का अच्छा साधन है, लेकिन इसका कोई भरोसा नही है। आज हिरणों का झुंड मिल गया और कल नही। लेकिन भूख तो रोज़ लगती है।

किसी ने कुत्ते को पालतू बना लिया। शायद वह शुरू मे बीमार या घायल रहा हो, मनुष्य को उस पर दया आयी, उसने उसका उपचार किया, उसे भोजन दिया। कुत्ते के साथ शिकार अच्छा होने लगा। कुत्ता जानवर की टोह लेता, आदमी उसका शिकार करता। मास और चर्म वह अपने काम लाता, हड्डिया और अतड़ियां अपने चौपाये सहायक को देता।

धीरे-धीरे लोग दूसरे जगली जानवरो को भी पालतू बनाने लगे। यह कोई आसान काम नही था और न ही जल्दी हो जानेवाला। पर खैर, आखिर उनके पास पालतू मवेशी हो गये।

कंद-मूल बटोरने का काम भी अब औरतो और बच्चों के लिए भारी पडने लगा। डेरों मे खानेवालों की संख्या बढ़ रही थी। सबके लिए भला कहा से बटोरा जाये? औरतों ने देखा कि जगली अन्न के बीज यदि नदी तट पर नम कीच मे बो दिये जाये तो यहा जगली मैदान मे उगे पौधो से अधिक बड़े और मजबूत पौधे उगते हैं। उन पर बालियां भी बड़ी आती हैं और दाने भी भरे-पूरे होते हैं। और फिर सारा-सारा दिन एक-एक बाली करके ढूंढने की भी जरूरत नही। जहा बीज बोये वही उग आये। सो लोग पौधो के बीज जान-बूझकर काई-कीच मे दबाने मे लगे। एक तो इसलिए कि वे अच्छी तरह उगें, दूसरे इसलिए कि चिडिया न चुग लें। इस तरह कृषि का जन्म हुआ।

पशुपालन और कृषि से लोग तुरंत ही अधिक समृद्ध हो गये। लेकिन अब उनका कारोबार भी जटिल हो गया: शिकार भी करो, मवेशियों की देखभाल भी करो, जमीन की जुताई-बुआई भी करो, मिट्टी के बर्तन भी बनाओ और हथियार भी। एक गोत्र मे सभी कामों के लिए लोग पूरे नही पड़ते थे। सो लोग सोचने लगे कि क्यों न वे पड़ोसी गोत्र के साथ मिल जायें।

इस तरह गोत्र कबीलों में मिलने लगे। बड़े-बड़े समूहों मे जीना अधिक निरापद था, परंतु साथ ही अधिक कठिन भी। ऐसे मे काम कैसे बांटा जाये — कौन क्या करे? शिकार और आय का बंटवारा कैसे हो — किसे अधिक मिले, किसे कम?

तब यह तय किया गया कि सबसे अधिक समझदार लोग चुनकर कबीले की पचायत बनायी जाये। उसमे हर गोत्र का एक-एक आदमी हो ताकि किसी को बुरा न लगे। शिकार और युद्ध के लिए कबीले भी संगठित होते थे, अस्थायी कबीला-संघ बनाते थे। कृषि के लिए स्थायी संघ की जरूरत थी। नये खेत के लिए दलदल सुखाना हो या नहर खोदनी हो अथवा बाढ से बचने के लिए बांध बनाना हो — ये सभी काम तभी हो सकते थे, जबकि मिल-जुलकर कांम किया जाये। नदियों और झीलों के लिए उन सीमाओं का कोई महत्व नही था, जो लोगों ने पृथ्वी पर बना ली थी। सूखे से वे लोग अधिक पीड़ित होते थे जो नदी के ऊपरी मैदान मे रहते थे और बाढ से वे, जो निचले मैदान में। साझे काम से ही दोनों अपना जीवन बेहतर बना सकते थे। बहुत समय बीतने पर ही लोग यह बात समझ पाये। लेकिन आखिर समझ ही गये। शनैः-शनैः पृथ्वी पर मानव के प्रकट होने के हज़ारों साल बाद पहले राज्य बनने लगे। बेशक, वास्तव मे सब कुछ कही अधिक जटिल था। मैंने तो तुम्हें बस इतना बताया है कि यहां भी जरूरत ने, मजबूरी ने लोगों को संगठित होने का रास्ता सुझाया।

गिरता और हरी घाटियों पर हिम की मोटी चादर बिछ जाती। पहाड़ों में हिमनद बढ़ते और भारी होते जाते और महासागरों में जल कम होता जाता। कहीं-कहीं उथली जगहों पर तला भी दिखाई देने लगता और वह थल बन जाता। संसार के एक भाग से दूसरे तक स्थल-सेतु बन जाते।

वैसे, हम तुम्हें यह भी बता दें कि ऐसे सबसे भयानक हिम युग पृथ्वी पर मनुष्य के प्रकट होने से काफ़ी पहले ही हुए थे। लेकिन मनुष्य को भी ऐसे युग देखने को मिले।

स्वय अपने भार के प्रभाव से हिमनद पर्वत शिखरों से मैदानों की ओर बढ़ चलते। तृणभक्षी जीव ठंड से बचने के लिए दूर भागते और उनके पीछे-पीछे हिंसक जंतु भी। लोग भी उनके पीछे जाते।

स्थल-सेतुओं के रास्ते पशुओं के झुंड और आदिम शिकारी एशिया से अमरीका महाद्वीप पहुच सकते थे। दक्षिणी चीन सागर के उभर आये तले और जोंद द्वीपों के रास्ते वे आस्ट्रेलिया पहुच सकते थे।

हिम युग हज़ारों वर्षों तक चलते थे। लेकिन यह भी चिरकाल नही है! शनैः-शनैः सर्दी घटती, सूरज झांकता और फिर से गर्मी पहुंचाने लगता। उसकी गर्मी से बर्फ पिघलने लगती और हिमनद पीछे हटने लगते। खाली हो गयी ज़मीन पर फिर से हरी-हरी घास उगती, वन बनते। घनी चरागाहों मे बड़े-बड़े जानवर: मैमथ और बालदार गेंडे, हिरण और घोड़े आते। उनका पीछा करते शिकारी भी अपने पुराने निवास-स्थल छोड़ देते।

उधर सूरज की गरमी बढती जाती। तूफ़ानी नदियां सागरों-महासागरों में मिलतीं। जल का स्तर ऊंचा उठता और स्थल-सेतु डूब जाते। दूर चले गये लोग पीछे रह गये लोगों से सदा के लिए अलग हो जाते।

कई बार जलवायु इस तरह ठंडी और गरम हुई। हर बार ठंड और भुखमरी से बचने के लिए जीव-जंतु और मनुष्य उत्तरी गोलार्ध में दक्षिण को तथा दक्षिणी गोलार्ध मे उत्तर को जाते-जहां ठंड कम होती। सब कुछ गतिशील हो जाता—पशु-पक्षी और लोग सभी नये स्थानों पर जा बसते। बहुतों के लिए यह यात्रा असह्य होती वे मारे जाते, लेकिन बहुत से ज़िंदा बचे रहते। ऐसे हर देशांतरण के साथ मनुष्य के जीवन में कुछ नये परिवर्तन आते।

शिकार आहार पाने का अच्छा साधन है, लेकिन इसका कोई भरोसा नही है। आज हिरणों का झुंड मिल गया और कल नही। लेकिन भूख तो रोज लगती है।

किसी ने कुत्ते को पालतू बना लिया। शायद वह शुरू में बीमार या घायल रहा हो, मनुष्य को उस पर दया आयी, उसने उसका उपचार किया, उसे भोजन दिया। कुत्ते के साथ शिकार अच्छा होने लगा। कुत्ता जानवर की टोह लेता, आदमी उसका शिकार करता। मांस और चर्म वह अपने काम लाता, हड्डियां और अंतड़ियां अपने चौपाये सहायक को देता।

धीरे-धीरे लोग दूसरे जंगली जानवरों को भी पालतू बनाने लगे। यह कोई आसान काम नही था और न ही जल्दी हो जानेवाला। पर खैर, आखिर उनके पास पालतू मवेशी हो गये।

कंद-मूल बटोरने का काम भी अब औरतो और बच्चो के लिए भारी पडने लगा। डेरों में खानेवालों की संख्या बढ़ रही थी। सबके लिए भला कहां से बटोरा जाये? औरतो ने देखा कि जंगली अन्न के बीज यदि नदी तट पर नम कीच मे बो दिये जाये तो यहां जंगली मैदान में उगे पौधो से अधिक बड़े और मजबूत पौधे उगते हैं। उन पर बालियां भी बड़ी आती हैं और दाने भी भरे-पूरे होते हैं। और फिर सारा-सारा दिन एक-एक बाली करके ढूंढने की भी जरूरत नही। जहां बीज बोये वही उग आये। सो लोग पौधों के बीज जान-बूझकर काई-कीच मे दबाने मे लगे। एक तो इसलिए कि वे अच्छी तरह उगें, दूसरे इसलिए कि चिड़ियां न चुग लें। इस तरह कृषि का जन्म हुआ।

पशुपालन और कृषि से लोग तुरंत ही अधिक समृद्ध हो गये। लेकिन अब उनका कारोबार भी जटिल हो गया: शिकार भी करो, मवेशियों की देखभाल भी करो, ज़मीन की जुताई-बुआई भी करो, मिट्टी के बर्तन भी बनाओ और हथियार भी। एक गोत्र में सभी कामों के लिए लोग पूरे नही पड़ते थे। सो लोग सोचने लगे कि क्यो न वे पड़ोसी गोत्र के साथ मिल जायें।

इस तरह गोत्र कबीलों में मिलने लगे। बड़े-बड़े समूहों मे जीना अधिक निरापद था, परतु साथ ही अधिक कठिन भी। ऐसे में काम कैसे बांटा जाये – कौन क्या करे? शिकार और आय का बंटवारा कैसे हो – किसे अधिक मिले, किसे कम?

तब यह तय किया गया कि सबसे अधिक समझदार लोग चुनकर कबीले की पचायत बनायी जाये। उसमें हर गोत्र का एक-एक आदमी हो ताकि किसी को बुरा न लगे। शिकार और युद्ध के लिए कबीले भी संगठित होते थे, अस्थायी कबीला-संघ बनाते थे। कृषि के लिए स्थायी संघ की जरूरत थी। नये खेत के लिए दलदल सुखाना हो या नहर खोदनी हो अथवा बाढ से बचने के लिए बांध बनाना हो – ये सभी काम तभी हो सकते थे, जबकि मिल-जुलकर काम किया जाये। नदियों और झीलों के लिए उन सीमाओं का कोई महत्व नही था, जो लोगों ने पृथ्वी पर बना ली थी। सूखे से वे लोग अधिक पीड़ित होते थे जो नदी के ऊपरी मैदान में रहते थे और बाढ़ से वे, जो निचले मैदान में। साझे काम से ही दोनों अपना जीवन बेहतर बना सकते थे। बहुत समय बीतने पर ही लोग यह बात समझ पाये। लेकिन आखिर समझ ही गये। शनैः-शनैः पृथ्वी पर मानव के प्रकट होने के हजारों साल बाद पहले राज्य बनने लगे। बेशक, वास्तव में सब कुछ कही अधिक जटिल था। मैंने तो तुम्हें बस इतना बताया है कि यहां भी जरूरत ने, मजबूरी ने लोगों को संगठित होने का रास्ता सुझाया।

पहली यात्राएं

इतिहासकारों का मत है कि विकसित सस्कृतिवाले पहले राज्य नदियो के मैदानो मे प्रकट हुए थे। यह कहना कठिन है कि कहां सबसे पहले ऐसे राज्य बने। शायद दजला और फ़रात के दोआब में, या हो सकता है सिधु और गंगा के तटों पर, या फिर भरी-पूरी नील नदी के किनारे यहां बसे लोगों ने औरों से पहले जुताई और बुआई करना, ज़मीन नापना, नहरें खोदकर खेतों में पानी लाना सीख लिया था। अयस्क से धातु गलाने और गगनचुंबी भवन बनाने का काम भी यही पर सबसे पहले शुरू हुआ।

प्राकृतिक सम्पदा पृथ्वी के सभी भागो मे एक सी नही है। ऐसा हो सकता था कि कही पर अयस्क तो बहुत है, लेकिन नमक नही। दूसरे स्थान पर इससे उलट बात हो सकती थी। किसी बस्ती या शहर मे सुंदर कपड़ा बनाया जाता था तो कही वर्तन। लोगो के पास जो कुछ अधिक था उसका वे आदान-प्रदान करने लगे। एक दूसरे के यहां माल ले जाने लगे। व्यापारी प्रकट हुए। व्यापार का जन्म हुआ। व्यापारी वडे सूझ-बूझवाले व्यक्ति निकले। उन्होने देखा कि घिसे-पिटे रास्ते से अधिक दूर जाने का जो खतरा मोल लेगा वही अधिक लाभ पाकर लौटेगा। सो, पहली व्यापारिक यात्राएं शुरू हुईं। तभी लोगो को यह जानने की आवश्यकता हुई कि कहां कैसे लोग रहते हैं, उनके पास किस चीज़ की प्रचुरता है और किसकी कमी, कैसा उनका देश है।

भूमध्यसागर के तटों पर बहुत पुराने ज़माने से लोग बसते आये हैं। यहा सदा अनेक जन-जातियों के लोग रहते थे।

यही पर यूनानी संस्कृति का जन्म हुआ जो प्राचीन युग की पृथ्वी की विकसित सभ्यताओं मे से एक है। प्राचीन यूनान के दार्शनिक और विद्वान विज्ञान के लिए बहुत बड़ी धरोहर छोड़ गये है। वे ही उन लोगों मे थे जिन्होंने पहले मानचित्र बनाये। यूनानी अपने मानचित्रो मे पृथ्वी को एक बड़े द्वीप के रूप में दिखाते थे जिसके बीचोंबीच समुद्र है। इस द्वीप के चारों ओर वे ओशिएन नामक नदी दिखाते
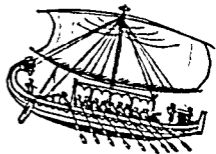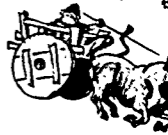
थे, जिसका कोई आदि-अंत नहीं था।

इस पृथ्वी को प्राचीन यूनान में ओयकुमेना कहते थे, यानी "वह धरती जिस पर मानवों का वास है"।

एशिया, भारत, चीन और ब्रिटानिया के कुछ भागों में भी घनी आबादी थी। भूमध्यसागर तटीय ओयकुमेना और उनके बीच हजारों किलोमीटर का दुर्गम रास्ता था, पहाड़ और रेगिस्तान थे। विरला ही कोई निडर व्यक्ति कारवां ले जाने या छोटे-छोटे जहाजों पर सात समुद्र पार जाने का साहस करता था। लेकिन जो वहां हो आता वह अजीबोगरीब वस्तु तो लाता ही, साथ में विचित्र देशों और आश्चर्यजनक लोगों के बारे में ढेरों कहानियां भी सुनाता। यात्री सम्पन्न देश भारत के बारे में बताते, जहां "सोने और रत्नों की खानें हैं", शक देश के निस्सीम मैदानों का वर्णन करते, जहां असंख्य घोड़े हैं और आदमकद से भी बड़ी घास उगती है। वे बताते कि मध्य एशिया के कारीगर अमूल्य धातु से कितने अच्छे शस्त्र बनाते हैं और ब्रिटानिया में कितना रांगा होता है जिसकी कांसा बनाने के लिए इतनी जरूरत है।

उन दिनों हर यात्रा एक असाधारण घटना होती थी। साहसी यात्रियों के नाम इतिहास में बने रहते थे। उनके बारे में किंवदंतियां प्रचलित होती थीं और लोग गीत गाते थे। पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोग उनकी यात्राओं के किस्से सुनाते थे। परदेस की, परदेसी लोगों की कहानियां सुनने-सुनाने से अधिक रोचक और कुछ नहीं था। शायद तभी सुननेवालों के मन में यह सवाल उठा हो: "कैसी है हमारी पृथ्वी? किसके जैसी? उसका ओर-छोर कहां है?"

अध्याय दो

लोग पृथ्वी पर जितनी अधिक यात्राए करने लगे, उतना ही अधिक उनके मन में यह विचार उठने लगा "पृथ्वी कैसी है, उसका रूप क्या है?" विद्वानो का ऐसा मत है कि इस बात पर सबसे पहले जिन लोगो ने सोच-विचार किया, उनके देश का नाम था त्यान-स्या, जिसका अर्थ है "मध्य राज्य"। बूझोगे कौन-सा देश है यह? हां, चीन ही–संसार का एक सबसे प्राचीन राज्य। चीन सर्वोच्च शासक सम्राट होता था। समय-समय पर नये म्राट को यह सूझती कि वह अपने राज्य की सीमाओ ा ठीक-ठीक पता लगाये। बस, इस काम के लिए राजधानी चारों दिशाओं को सम्राट के अधिकारी भेजे जाते।

कुछ अधिकारी आरामदेह रथों में बैठकर जाते। हर थ मे एक गुप्त यंत्र होता था, जिसकी सुई सदा एक ही दिशा मे रहती थी। ऐसा यंत्र पास मे हो तो कभी रास्ते से नही भटक सकते। चीन में इसे "दक्षिण सूचक" कहा जाता था।

यह प्राचीन गुप्त यंत्र आज तक बना रहा है। इसे कुतुबनुमा या कम्पास कहते हैं और सब लोग जानते हैं कि यह कैसे काम करता है। कोई पेचीदा बात नही है–एक डिबिया है और उसमे लगी है चुम्बकीय सुई। इसका नीला सिरा दक्षिण दिशा दिखाता है और लाल सिरा उत्तर दिशा।

कई-कई दिनों और सप्ताहों तक रथ मैदानों, रेगिस्तानों में चलते जाते थे। सम्राट के अधिकारी जिधर भी जाते वही देखते कि तारे सदा पूरब से पश्चिम को चलते हैं। "ऐसा क्यों है?" वे सोचते। लेकिन अपने इस प्रश्न का कोई उत्तर उन्हे न मिलता।

दूसरे अधिकारी पहाड़ों में जाते। वहा के सकरे रास्तों पर रथ तो चल नही सकते, सो उन्हें पालकियों में ले जाया जाता। तंग पालकियों में वे धचके खाते जाते और हैरान होते: "क्या कारण है कि मध्य राज्य का एक भाग इतना ऊंचा है, आसमान को ही छूता है, और दूसरा भाग नीचा है?" लेकिन वे भी अपने प्रश्न का कोई उत्तर न सोच पाते।
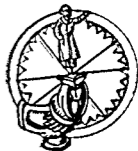
कुछ और अधिकारी नावों पर प्रस्थान करते। बड़ी नदियों में और नहरों में नावें तैरती जातीं। चाकर अधिकारियों के सिर पर छाता ताने रहते, झलते। "सम्राट के देश में सभी नदियां पश्चिम से को ही क्यों बहती हैं?" अधिकारियों के मन में यह उठता, लेकिन खूब दिमाग लड़ाने पर भी उन्हें कोई न सूझता।

सम्राट के दरबार में जो विद्वान थे वे भी इन पहे में उलझ गये। उधर सम्राट था कि सभी प्रश्नों के पाना चाहता था, सो उन्होंने अंततः यह तय किया: " यह मान लेते हैं पृथ्वी सपाट है, चपाती जैसी, क सिरोंवाली। पृथ्वी के हर सिरे पर एक स्तम्भ है, पर आकाश टिका हुआ है। एक स्तम्भ उत्तर में, एक में, एक दक्षिण में और एक पश्चिम में। जितनी हैं, उतने ही स्तम्भ।

"एक बार एक दुष्ट अजदहे ने एक स्तम्भ दिया। बस, तब से पृथ्वी और आकाश अलग-अलग दि मे झुक गये। पश्चिमी प्रांत पहाड़ बनकर आकाश

लगे, जबकि पूरबी प्रांत समुद्र की ओर झुक गये। सो मध्य राज्य में नदियां पूरब को बहने लगी, और आकाश पर तारे पश्चिम को चलने लगे .."

यह बात सबको जच गयी और सब ऐसी व्याख्या से सतुष्ट हो गये।

चीनियों ने अपने देश के बारे मे पाच सौ पुस्तकें लिखी। कागज़ के पांच सौ मोटे बडल, जिनमे देश के सभी प्रातों का वर्णन था, यही नही उनसे परे जो इलाके थे, उनका भी वर्णन था।

लेकिन फिर एक बहुत बडे युद्ध के बाद चीन मे एक नये सम्राट का राज हुआ। वह अजदहे जैसा दुष्ट था और ऊपर से मूर्ख भी, जिससे उसकी दुष्टता और बढती थी। उसने पुस्तकों में पढा कि मध्य राज्य की सीमाओ के पार भी लोग रहते हैं और चीनियों से किसी दृष्टि से बुरे नही हैं। यह भला कैसे हो सकता है? सम्राट ने तुरत वे सारी पुस्तकें जला डालने का आदेश दिया, जिनमे दूसरे देशो का वर्णन था। उसके हुक्म से सभी चीनियों के मन मे यह बात बिठायी जाने लगी कि चीन से परे कुछ भी रोचक नही
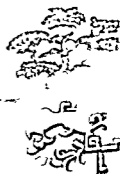
है। इस दुष्ट सम्राट ने चीन का नाम भी बदलकर "चुन हुआ-गो" कर दिया, जिसका अर्थ है "फलता-फूलता मध्य राज्य"। तब से चीनियों के लिए उनके देश का यही नाम हो गया, हालांकि यहां सब कुछ इतना फलता-फूलता नहीं था

मेहनतकश लोग तो गरीबी में, चिंताओं और दुखों से घिरे जीवन व्यतीत करते थे। अधिकारी और धनी लोग ही ऐशो-आराम करते थे। संसार में अक्सर ऐसा होता है: दशा जितनी बुरी होती है, शब्द उतने ही सुंदर होते हैं...

अधिकारी अपने सम्राट को "देव पुत्र" कहते थे और उन्हे इस बात की बड़ी चिंता रहती थी कि "देव पुत्र" की प्रजा मे कोई भी चीन से बाहर पांव तक न रखे, सो उन्होंने चीन का एक और नाम रख दिया "सी हाय", जिसका अर्थ है "चार समुद्र"। अधिकारियों का कहना था कि चीन ही सारी पृथ्वी है। हां-हां, सारी पृथ्वी पर बस चीन ही है। और वह चारों दिशाओं में तूफ़ानी सागरों से घिरा हुआ है, जिनमें भीमकाय मच्छ और भयावह अजदहे रहते हैं। बहुत से लोग इन बातों पर विश्वास करते थे और अपने घरों में ही बैठे रहते थे।

बहुत से लोग विश्वास करते थे, लेकिन सभी नहीं। आज भी हमे प्राचीन चीनियों की यात्राओं के वृत्तात मिलते हैं।

घोड़ों पर सवार अधिकारी जाते, भारी गाड़ियों में राजनय जाते, गुप्तचर लुक-छिपकर बढ़ते। भिक्षु पैदल जाते, व्यापारियों के कारवां चलते। चीनी यात्री केंद्रीय और मध्य एशिया के अनजान इलाकों में भी पहुंचते और देखते कि यहां भी सभ्य लोग रहते हैं। खेती करते हैं, तरह-तरह के औज़ार, कपड़ा, आभूषण बनाते हैं। चीनी दूर के देशों मे अपना माल ले जाकर बेचते। यहां के निवासियों के पास भी बेचने के लिए कई चीजें थी। उनमे बहुत सी तो चीनी चीज़ों से किसी लिहाज़ मे कम नही थी।

जो लोग पहाड़ों के पार दक्षिण की ओर जाते, वे आश्चर्यजनक देश भारत पहुंचते, जहां ऋषि-मुनि रहते थे।

प्राचीन भारत को ऋषियो-मुनियों का देश अकारण ही नही कहा जाता था। उन पुराने दिनों मे जब आस-पड़ोस के देशों में सभ्यता का जन्म ही हो रहा था, यहा, इस विशाल प्रायद्वीप पर, जो एक जिह्वा की भाति हिंद महासागर के नीले-हरे विस्तार में बढ गया है, अनेक विद्वान रहते थे। भारत में कई छोटे-छोटे जनपद थे। हर राजा के दरबार में विद्वान होते थे। सब लोग उनका बहुत आदर करते थे।

उनमें गणितज्ञ और खगोलविज्ञानी, चिकित्सक और दार्शनिक होते थे, जो अनबूझ प्रश्नों पर चिंतन-मनन करते थे। इन्हें महर्षि कहा जाता था।

तो ये महर्षि पृथ्वी की कल्पना किस रूप मे करते थे?

इस बारे में कोई एक मत नही था। वैसे, अधिकांश महर्षि इस बात पर सहमत थे कि पृथ्वी सपाट है। चीनियो की "कटे-छंटे सिरोंवाली चपाती" जैसी सपाट तो नही, बल्कि विराटाकार चक्र जैसी। इस चक्र के केंद्र मे मेरु पर्वत है। सूर्य-चंद्रमा और तारे मेरु पर्वत की परिक्रमा करते है। इसके आगे ऋषियों के बीच मतभेद शुरू हो जाते है।

और गंगा के मैदानों को घेरे हैं। यह कमल पुष्प निस्सीम सागर में उगा हुआ है और इसका डंठल सागर के तले मे दबा हुआ है।

लेकिन इस रूप से भी सभी ऋषि सहमत नही थे। जो इससे असहमत थे, वे पृथ्वी का अपना दृश्य प्रस्तुत करते थे। उनका कहना था कि क्षीर सागर मे भीमकाय कछुआ तैरता है। उसके कवच से अधिक मजबूत और क्या चीज हो सकती है? कछुए की पीठ पर चार हाथी खड़े हैं। हाथी से बढ़कर शक्तिशाली और कौन हो सकता है? हाथी चारों दिशाओं में सिर किये और सूंड ऊपर उठाये खड़े हैं। उनकी मजबूत पीठों पर गोल और चपटी पृथ्वी टिकी हुई है।

प्राचीन भारत के ऋषियों-मुनियों ने आश्चर्यजनक रूपो की कल्पना की थी!
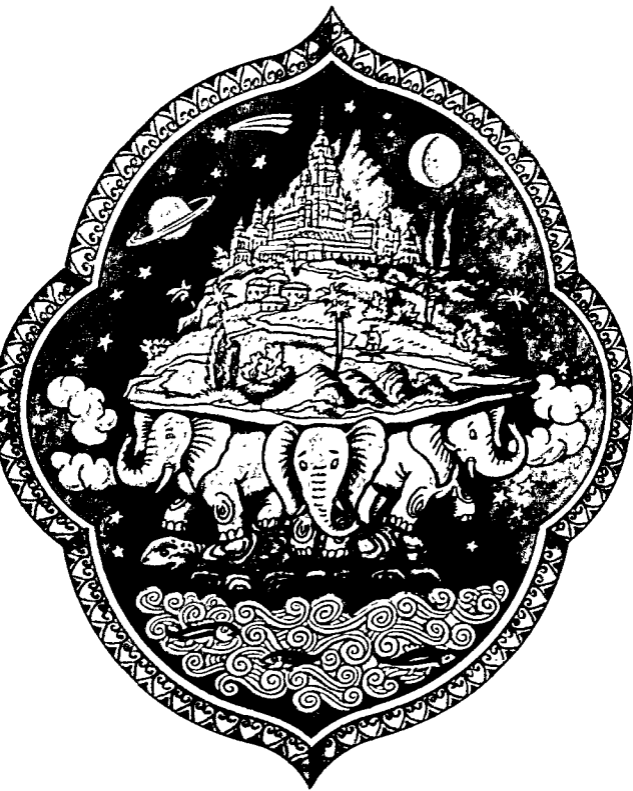
फ़ोयेनिशियन लोग विचित्र थे और रहते भी वे एक विचित्र देश मे थे। सही-सही कहा जाये तो फोयेनिशिया जैसा कोई देश था ही नही। यह नाम तो प्राचीन यूनानियो ने भूमध्यसागर और ऊंची पर्वत शृंखला के बीच फैली जमीन की पट्टी का रखा था। अब यहां लेबनान राज्य है। कई स्थानों पर पहाड़ कटे-छंटे सागर तट तक चले आये है और इस तरह ज़मीन की यह पट्टी कई छोटे-छोटे हिस्सो मे बंटी हुई है। पहाड़ी नदियां इस ज़मीन को सींचती है और इसे उपजाऊ बनाती है। लेकिन ज़मीन थोडी ही है। प्राचीन युग से ही यहां एक दूसरी से सटी बस्तिया बनती आयी हैं। शनैः-शनैः ये मिलकर नगर का रूप धारण कर लेती थी और प्रत्येक नगर एक अलग राज्य होता था। फ़ोयेनिशियन नगर अपनी सुविधाजनक भौगोलिक स्थिति का लाभ उठाते थे। यहां से कारवा दजला और फ़रात के दोआब को, नील नदी के मैदानों को जाते थे, भूमध्य-सागर के तटों पर स्थित सभी देशों को जहाज यहा मे जाते थे।

सदियां बीतती जाती, फ़ोयेनिशिया मे नये-नये बंदरगाह बनने जाते और व्यापारियों की बस्तियां भी। इनमें मे कुछ सशक्त और स्वतंत्र राज्य बन जाते, जैसे कि कार्थेज।

फोयेनिशिया के रंगसाज़ बेजोड़ नीललोहित रग बनाते थे, जिससे ऊन रंगा जाता था और इस ऊन मे बड़े-बड़े धनी और अभिजात लोगों के लिए ही वस्त्र बनते थे। यहा पर
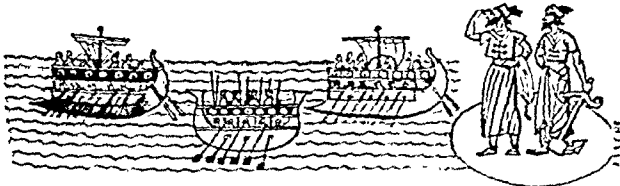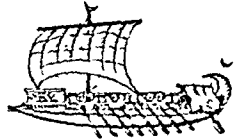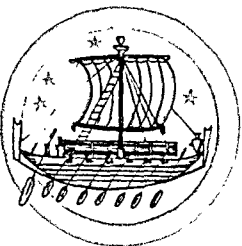
ही लोहा गलाया और ढाला जाता था, कांच के बर्तन और आभूषण बनते थे। जहाज बनाने में तो फ़ोयेनिशियनों का कोई सानी ही नही था! देवदार के बड़े-बड़े पेड़ों से जहाज का चौड़ा पेटा बनाया जाता था, उस पर पटरे लगाते थे, ताकि प्रचंड लहरें भी जहाज का कुछ न बिगाड़ सकें, मेवैये बचे रहें। डांड़ों के साथ-साथ ऊंचे मस्तूलों पर पाल भी लगाये जाते थे। ऐसे एक जहाज पर तीस तक सेवैये होते थे। साहसी जहाजी न देवों से डरते थे, न दैवों से, न आंधी से, न तूफ़ान से। फ़ोयेनिशियन कर्णधार भूमध्यसागर में सारे रास्ते जानते थे। इससे आगे भी वे जाते थे।

सातवी सदी ई० पू० में मिस्र के फ़राऊन नेहो द्वितीय ने फ़ोयेनिशियन जहाजों को अफ़्रीका के किनारे-किनारे जाने का आदेश दिया था। उन्हें तब तक आगे बढ़ते जाना था, जब तक कि कोई अलंघ्य बाधा उन्हें वापस लौटने पर विवश न कर दे। यह यात्रा पूरे तीन साल चली। निडर जहाजी महाद्वीप का चक्कर काटकर दूसरी ओर से स्वदेश लौटे।

लंबी यात्रा से लौटते हुए सभी जहाजी बड़ी अधीरता से यह देखते हैं कि कब अपने देश का तट नजर आयेगा।
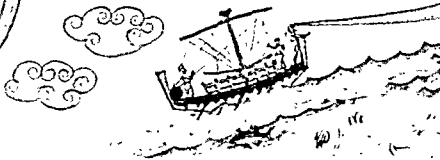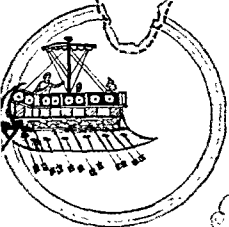
फ़ोयेनिशियन जहाजी भी इस क्षण का इतज़ार करते थे। उन्होंने इस बात की ओर ध्यान दिया कि समुद्र मे से सबसे पहले पहाड़ों की चोटियां नज़र आती है। जब जहाज़ और पास पहुंचता है तो कम ऊंचे पहाड दिखाई देने लगते, और भी पास पहुंचने पर आखिर नगर के भवन डोल्फिनो की भांति समुद्र में से उभर आते हैं।

"ऐसा क्यों है?" जहाजी अचरज मे पड़ जाते। "अगर पृथ्वी सपाट है तो उसपर सब कुछ एकसाथ दिखाई देना चाहिए? कहीं यह बात गलत तो नही कि पृथ्वी रोटी जैसी सपाट है? वह तो आधे सेब जैसी लगती है। अगर हम यह कल्पना करें कि पृथ्वी उभरी हुई है, तब यह समझ मे आ जाता है कि समुद्र में से पहाड़ों की चोटिया ही क्यों पहले नज़र आती हैं, और यह भी कि मस्तूल के ऊपर चढ़कर अधिक दूर तक क्यों देखा जा सकता है.. "

यों फ़ोयेनिशियन जहाज़ियों ने यही मान लिया कि पृथ्वी उभारदार है। आधे सेब या नारंगी जैसी, जिसे पानी से भरी तश्तरी में रखा गया है। यह पानी समुद्र है और तश्तरी के सिरों पर पलटी हुई बड़ी नीली रकाबी यानी आकाश टिका हुआ है।

अजीब नमूना है न पृथ्वी का?
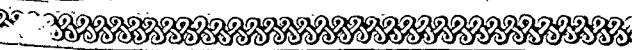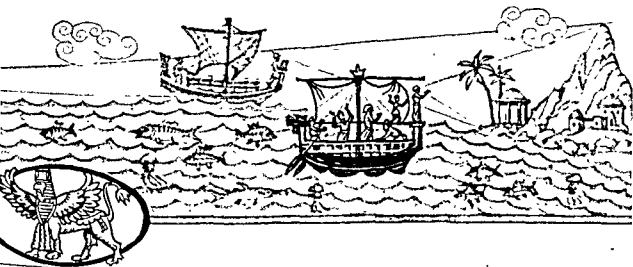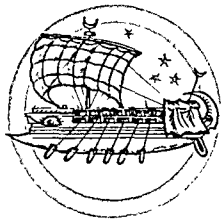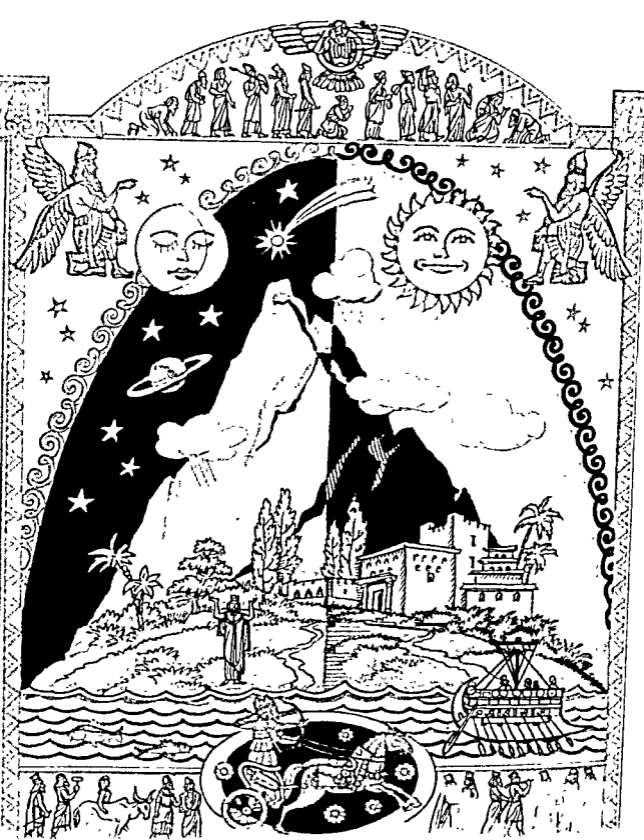
अब शायद ही कोई इस प्रश्न का सही-सही उत्तर दे सके। उन पुराने दिनों मे हर विकसित राज्य मे अपने-अपने विद्वान होते थे और उनमे बहुतों के मस्तिष्क मे अलग-अलग कारणों से यह विचार आया होगा। उदाहरण के लिए, प्राचीन यूनानी चितक पाइथागोरस का कहना था कि गोला सबसे सुदर ज्यामितीय आकृति है। सो, यदि पृथ्वी ब्रह्मांड का केंद्र है तो उसका रूप और क्या हो सकता है? बहुत से विद्वान पाइथागोरस की इस बात से सहमत थे। लेकिन इसे सिद्ध कैसे किया जाये? कैसे यह बताया और उदाहरण देकर दिखाया जाये ताकि किसी के मन मे कोई संशय न रहे? प्राचीन यूनानी दार्शनिक अरस्तू ऐसा करने मे सफल रहे। अरस्तू बहुत ज्ञानी थे। वह अनेक विषयों मे पारगत थे। विख्यात सेनापति सिकदर महान के गुरु थे। उन्होंने एथेंस मे सारे प्राचीन जगत मे प्रसिद्ध दर्शन-विद्यालय खोला था। अरस्तू की ख्याति इतनी थी कि तुरंत ही अनेक शिष्य वहां विद्या पाने चले आये। सिकंदर ने, महान सेनापति बन चुकने पर भी कभी अपने गुरु को नही भुलाया। दूर-दूर के देशो से वह उन्हें पत्र भेजता था और वहा मिलनेवाली विचित्र वस्तुएं भी।

हर सच्चे विद्वान की भांति अरस्तू की ज्ञान-पिपासा भी अनबुझ थी, वह सदा अधिक, और अधिक जानना चाहते थे। ज्ञान तो ऐसी सम्पदा है, जिसे संचित करना किसी के लिए भी शर्मनाक नही है!

उन दिनों मनुष्य जिन अनेक प्राकृतिक परिघटनाओ का रहस्य नही बूझ पाया था, उनमे एक चंद्र-ग्रहणों का रहस्य भी था। चंद्र-ग्रहण क्यों होते है? यह कोई नही समझ पाता था। कुछ लोगों का खयाल था कि दुष्ट दैत्य आकाश से चद्रमा को चुराने की कोशिश करते है ताकि लोग उसकी रजत ज्योत्स्ना न पा सके। कुछ दूसरे लोगों का यह विश्वास था कि चंद्र-ग्रहण किसी भयानक विपत्ति का अग्रदूत होता है: शायद युद्ध का और उसके साथ अकाल व भुखमरी का। कुछ लोग ऐसी भी गप्पें हांकते थे कि ग्रहण के समय हवा दूषित हो जाती है और लोग दम घुटने से
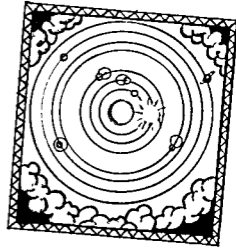
अरस्तू

मर जाते हैं। कान के कच्चे लोग ऐसे धोखे मे आ जाते थे, गहरे तहखानों मे जा छिपते थे, दरारें, खिड़कियां बंद कर लेते थे।

अरस्तू कायर नही थे। उन्होंने अनेक बार चंद्र-ग्रहण देखा और उनका कुछ नही बिगडा। अपने प्रेक्षणों से वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि चद्रमा के पहलू पर प्रकट होनेवाला काला धब्बा पृथ्वी की छाया ही है, जो पृथ्वी के सूर्य और चद्रमा के बीच आ जाने पर चंद्रमा पर पड़ती है। लेकिन यह छाया सदा गोल क्यों होती है?

अरस्तू एक चपाती लेकर धूप में आये। चपाती से एक स्थिति में गोल छाया पड़ती और दूसरी स्थिति में टहनी जैसी पतली। इसका मतलब यह हुआ कि पृथ्वी सपाट चपाती जैसी नही हो सकती।

तब उन्होंने आधी नारंगी काटकर उसे भी सूरज के आगे रखा। आधी नारंगी की छाया तभी गोल होती, जबकि सूरज की किरणें कटे हुए भाग पर या उभारदार "पीठ" पर पड़ती। लेकिन आधी नारंगी की बगल सूरज की ओर करते ही उसकी छाया अधूरे वृत्त के रूप में होती...

पूरी नारंगी या पूरे सेब की ही, उन्हें चाहे जैसे भी घुमाओ, छाया सदा गोल पड़ती है।

"इसका अर्थ है कि हमारी पृथ्वी भी एक गोला है!" अरस्तू ने अपने शिष्यों से कहा और
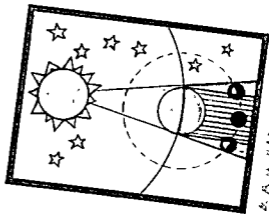
उन्हें यह दिखाया कि वह कैसे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं। शिष्य आंखें फाड़-फाड़कर अरस्तू को देख रहे थे, उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। बस एक ही बात समझ में नहीं आ रही थी – लोग पृथ्वी के निचले गोलार्ध पर कैसे रहते हैं? वे सिर नीचे करके कैसे चलते हैं और गिरते क्यों नहीं?

इस प्रश्न का तो कोई उत्तर अरस्तू भी नहीं खोज पाये। तब यह तो किसी को नहीं पता था न कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति न केवल लोगों को, बल्कि पर्वतों, भवनों, नदियों और सागरों और हवा तक को धरातल पर बनाये रखती है।

अरस्तू को भी यह नहीं पता था। इसलिए स्वयं उन्होंने, उनके शिष्यों और अनुयायियों ने यह मान लिया कि दक्षिणी गोलार्ध पर कोई नहीं रहता। वैसे कुछ विद्वानों का यह मत था कि वहां "उलटे लोग" रहते हैं।

अध्याय तीन
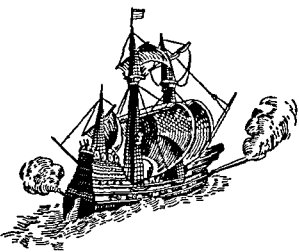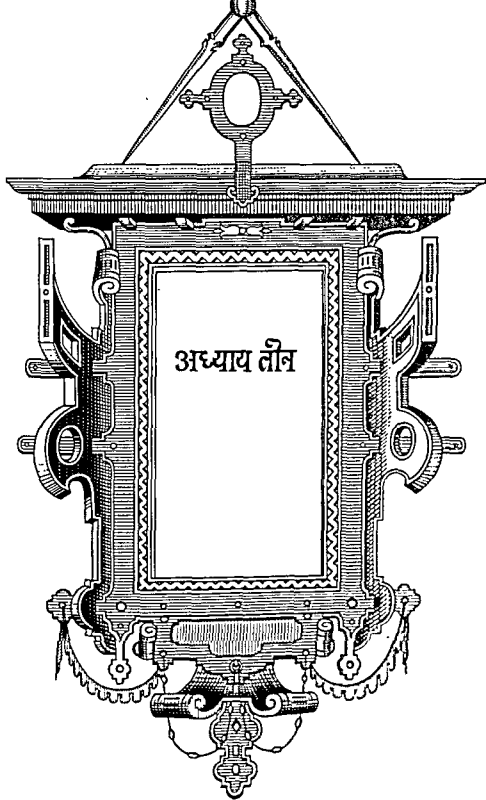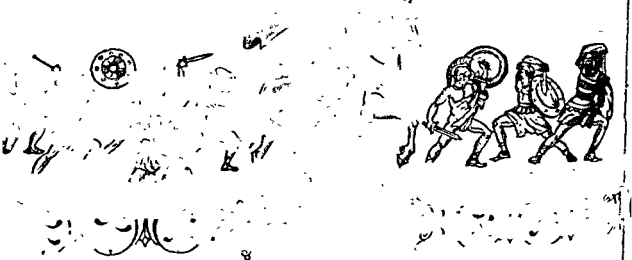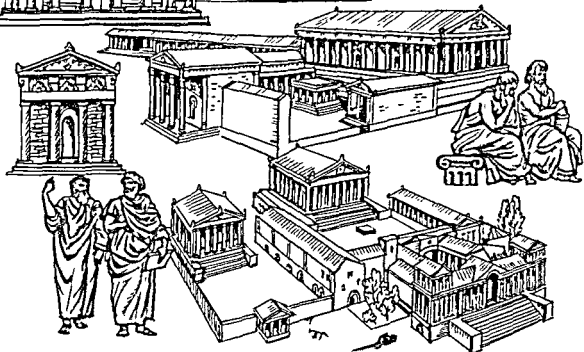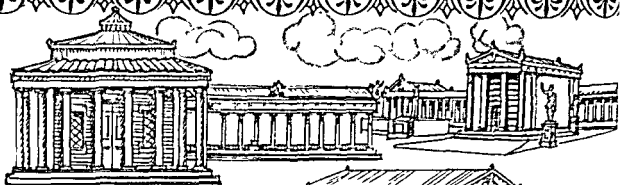
सिकदर महान ने अपने सैनिकों के साथ आधी दुनिया चक्कर लगाया। मिस्र में उसने नील नदी की एक शाखा ट पर, व्यापार मार्गों के चौराहे पर नगर बसाने का आदेश ा। इसका नाम सिकंदरिया रखा गया। समय बीतता गया। ों को यह स्थान पसंद आया। यहां बसने के इच्छुकों की कमी न थी। नगर बड़ा ही बड़ा होता जा रहा था। र से आनेवाले चकित होकर इसकी खुली सड़के और ी ईंट के बहुमंज़िले मकान देखते थे। लेकिन सिकंदरिया सच्चा चमत्कार थे म्यूज़ेओन और पुस्तकालय। म्यूजेओन अर्थ है म्यूज़ यानी कलादेवी का आलय। वास्तव मे यह ा विश्वविद्यालय था, या तुम इसे पहली विज्ञान अकादमी कह सकते हो। सारे ओयकुमेना के विद्वान, कवि और दार्शनिक रहते थे। वे सभी इच्छुकों को व्याख्यान देते थे, प्रयोग ते थे, अभियानों पर जाते थे और पुस्तके लिखते थे। पुस्तकें लंबे-लंबे कागज़ों पर लिखी जाती थी, जिन्हें नली तरह लपेटकर मोटे चमड़े के केसों में रखा जाता था। केस एक स्थान पर सुरक्षित रखे रहते थे, यही पुस्तकालय । होते-होते यहां कई लाख हस्तलिखित पुस्तके जमा हो ।

तीसरी सदी ई० पू० में ऐरातोस्थेनस नाम का एक विद्वान, ोल और खगोलिकी का ज्ञाता म्यूज़ेओन में रहता था। सिकंदरिया के पुस्तकालय का पहला सरक्षक था। ऐरातो-

रही हैं। उसके काम के बारे में हमें कालांतर में हुए विद्वानों की कृतियों से ही अधिक पता चलता है। उन्होंने लिखा है कि इस विद्वान ने "गेओग्राफ़िका" नामक एक पुस्तक लिखी थी। प्राचीन यूनानी भाषा में "गेओग्राफ़िका" का अर्थ है "भूमिवर्णन"। यह तो तुम समझ ही गये होगे कि इसी विषय को अब भूगोल कहा जाता है। ऐरातोस्थेनस ने अपनी पुस्तक को तीन भागों में बांटा. पहले भाग में उन्होंने भूगोल का इतिहास दिया। दूसरे में गणितीय भूगोल के मूलभूत नियम समझाये। तीसरे भाग में नवीनतम जानकारी के अनुसार थल का विवरण दिया।

सभी प्राचीन यूनानी विद्वानों की ही भांति ऐरातोस्थेनस भी भूमध्यसागर के पास फैले ओयकुमेना की ओर ही मुख्यत ध्यान देता था। वह उसे एक बड़ा द्वीप मानता था, जो महासागर से घिरा है और पृथ्वी के उत्तरी गोलार्ध में समोष्ण जलवायुवाले भाग में स्थित है। उन दिनों सभी यूनानी विद्वानों का यह मत था कि उष्ण कटिबंध में भयानक गर्मी के कारण वह निर्जन है। दक्षिणी गोलार्ध के समोष्ण कटिबंध के बारे में उनका कहना था कि शायद वहा कोई अज्ञात देश हो, जहा "उलटे लोग" रहते हों।

उनकी कल्पना में उनके इस "थल-द्वीप" की रूप-रेखा यूनानी पुरुषों के उस लबादे जैसी थी, जो अलग-अलग रंगों के आयताकार टुकड़ों से बनाया जाता था। ये विद्वान थल को तीन भागों में बांटते थे – यूरोप, एशिया और लीबिया। बहुत बाद में रोमनों ने लीबिया का नाम अफ़्रीका कर दिया, यहा बसी एक शक्तिशाली जन-जाति "अफ़्रीगी" के नाम पर।
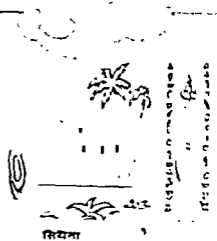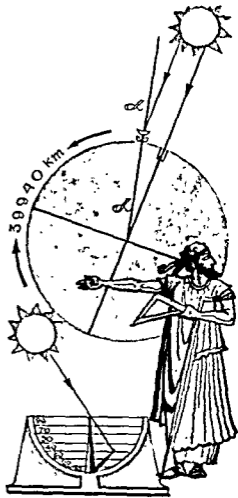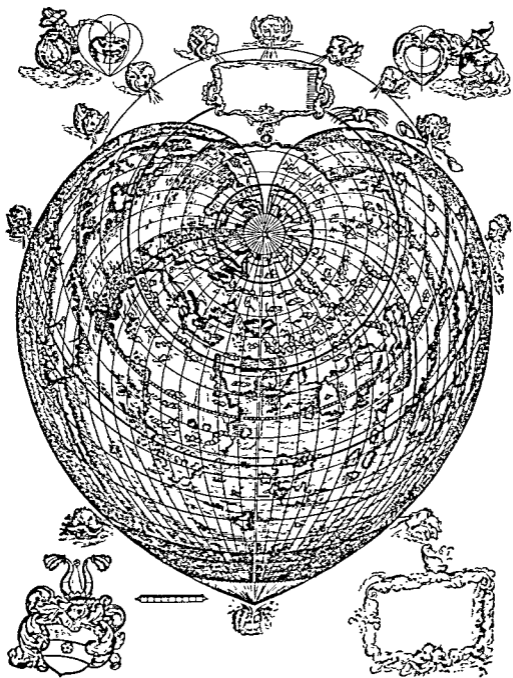
टोलेमी का एक मानचित्र। यह माना जाता है कि उसने ही सबसे पहले मारे मानचित्र पर समानांतर और देशांतर रेखाएं खींची।

ओयकुमेना के अलग-अलग भागों की यात्रा करते समय जहाज़ी अपनी दिक्-स्थिति का, रास्ते का पता कैसे लगाते थे? प्रत्यक्षतः लोगों को अलग-अलग स्थानो के बीच की दूरी ज्ञात थी और वे एक दूसरे को बताते थे कि वहां तक इतने स्तादिया का फ़ासला है, या इतने दिनों का रास्ता है। दिशा और सही रास्ता चुनना अधिक आसान बनाने के लिए यूनानी भूगोल-वेत्ताओं ने यात्रियों को ज्ञात स्थानों को जोड़ती रेखाएं खीची। ऐसी एक रेखा, जिसे डायाफ़ाग्म, यानी मध्य रेखा कहा जाता था, हर्क्युलिस के स्तंभ (जिब्रालटर जलडमरूमध्य) से शुरू होती थी, फिर भूमध्यसागर में मेसिन जलडमरूमध्य और पेलोपोनेसस के दक्षिणी सिरे से होती हुई रोड्ज़ (रोडोस) द्वीप तक और उससे आगे एशिया माइनर पर्वतमाला के दक्षिणी छोर के साथ-साथ जाती थी। यह "डायाफ़ाग्म" रेखा भूमध्यरेखा के समानातर थी और ओयकुमेना को दो भागों में बांटती थी। "डायाफ़ाग्म" को एक दूसरी रेखा काटती थी, जो दक्षिण में मेरोए राज्य (अब यह स्थान सूडान मे है) से शुरू होकर नील नदी के मैदान से होती हुई सिकंदरिया तक फिर रोड्ज़ द्वीप और बैज़ंतिया से आगे बोरीसफ़ेन नदी, जिसे अब द्नेप्र कहते हैं, के मुहाने तक जाती थी। इन रेखाओं की बदौलत मानचित्र बनाना अधिक आसान हो गया।

बाद मे इन दो रेखाओं के समानांतर दूसरी रेखाएं भी जोड़ी जाने लगी, जो प्राचीन जगत के महत्वपूर्ण स्थानों से गुज़रती थी। प्रायः दूसरी सदी ई० मे प्रसिद्ध गणितज्ञ, खगोलविज्ञानी और भूगोलवेत्ता क्लाउडियस टोलेमी ने सारे मानचित्र पर समानांतर और देशांतर रेखाएं खींचीं। समानांतर रेखाएं भूमध्यरेखा के समानांतर थीं और देशांतर रेखाएं उत्तरी ध्रुव से शुरू होकर इन रेखाओं को काटती थी। टोलेमी प्राचीन विद्वानों के इस मत से सहमत नहीं था कि थल एक द्वीप है। वह फ़ोयेनिशियन जहाज़ियो की बातों पर विश्वास नही करता था और यह मानता था कि किसी को यह ठीक-ठीक पता नही है कि उत्तर या दक्षिण में कहीं थल का कोई छोर है या नही। इसलिए टोलेमी ने पृथ्वी का अपना मानचित्र बनाते हुए थल को अंत तक बढ़ा दिया और लिख दिया कि वहां "अज्ञात देश" है।

वह तो यह सुनना भी नहीं चाहता था कि एशिया के उत्तर और पूरब मे समुद्र है और "इथियोपिया" (यानी अफ़्रीका) के दक्षिण में महासागर है। उसके वर्णनों के अनुसार वैज्ञानिकों ने संसार का मानचित्र बनाकर देखा है। इसमें हिंद महासागर चारों ओर थल से घिर गया है और दक्षिण-पूर्वी एशिया किसी अज्ञात थल के रास्ते पूर्वी अफ़्रीका से जुड़ गया है।

किसकी बात सही है? यदि ऐरातोस्थेनस की तो यात्री जहाज़ों पर संसार के दूर से दूर स्थित देश तक पहुंच सकते हैं। और यदि टोलेमी की तो उनके जहाज़ों को थल से घिरे समुद्र में ही रहना पड़ेगा और लंबी यात्राएं थल पर ही करनी चाहिए।

टोलेमी को प्राचीन यूनानी विज्ञान का अंतिम मेधावी प्रतिनिधि माना जाता है। वह उस युग में हुआ जब प्राचीन यूनानी संस्कृति का ह्रास हो रहा था। उन दिनों ईसाई धर्म बड़े ज़ोरों से फैल रहा था। एक बार फिर यूरोप और एशिया में इस विचार ने जड़ पकड़ी कि पृथ्वी सपाट है। बेशक, हमारे ग्रह का सच्चा रूप जानने के पथ पर यह पीछे हटाया गया कदम था।

मेरे घर पर अलमारी में एक बड़ी सी पुस्तक रखी हुई है। यह प्राचीन स्लाव भाषा में हाथ से लिखी हुई है। इसका नाम है "पुस्तक ईसा मसीह की, यह और सारे संसार के वर्णन सहित"। छठी सदी ई० में एक यूनानी व्यापारी ने यह पुस्तक लिखी थी। उसका नाम था कोस्मा इंडिकोप्लोवस। इंडिकोप्लोवस कहलाना तब बड़े सम्मान की बात थी, क्योंकि इसका अर्थ था कि यह व्यक्ति "इंडिया" यानी भारत की यात्रा कर आया है।

कोस्मा ने सचमुच ही अपने व्यापार के सिलसिले में लंबी-लंबी यात्राएं की थीं। वृद्धावस्था में वह मठवासी हो गया और मठ में ही उसने यह पुस्तक लिखी, जिसमें संसार के देश-विदेश का वर्णन किया। इस मठवासी-व्यापारी-यात्री ने बाइबिल को ही अपने वर्णन का आधार बनाया। बाइबिल का अनुसरण करते हुए उसने लिखा कि पृथ्वी सपाट और चौकोर है। इस
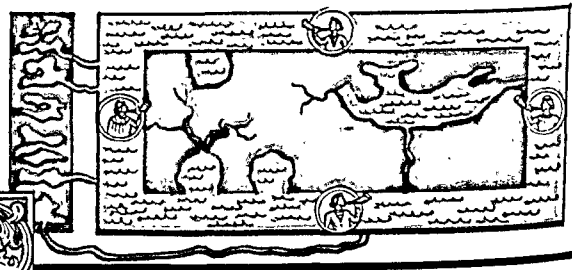
ौकोर पृथ्वी के चारो ओर महासागर हिलोरें लेता है। यह महासागर ऊंची ीवारों मे बंद है, इन दीवारों पर आकाश का ठोस, पारदर्शी गुम्वद टिका आ है, जिस पर देवदूत तारों को चलाते है।

कोस्मा के अनुसार इस ठोस आकाश के पार "आकाश का जल" , जो समय-समय पर वर्षा के रूप मे गिरता है। उत्तर मे कोस्मा ने एक ंचा पहाड़ बताया और कहा कि सूरज दिन भर का चक्कर लगाकर इसी पहाड़ पीछे छिपता है और तब सारी धरती पर रात हो जाती है।

इस पुस्तक में बहुत से चित्र है। कुछ चित्र तो इस पुस्तक की रूसी नकल करनेवालों ने मूल यूनानी पुस्तक से लिये थे और कुछ अपनी तरफ़ जोड़ दिये थे। देश-विदेश का वर्णन करते हुए कोस्मा ने जो कुछ देखा और ो कुछ सुना उस सब के बारे मे लिखा। यही कारण है कि पुस्तक मे ऊंट, ल, हाथी जैसे जीवों के साथ-साथ "वराहहाथी", "नकसीगा" और *एकशृंगी*" जैसे काल्पनिक जीवों के चित्र भी हैं।

यह कहना कठिन है कि यूनानी भाषा से रूसी भाषा मे इस पुस्तक का नुवाद कब हुआ और किसने किया। हा, बात यह बहुत पुरानी है। सभी देशों में लोगों को यात्राओं की कथाएं पढ़ने या सुनने का शौक था। रूस के पढ़ाकुओ को सिकंदरिया के व्यापारी कोस्मा की पुस्तक अच्छी लगती थी। तुम पूछोगे: "इसमें तो इतनी कपोल-कल्पनाएं है – फिर भला यह उनको कैसे अच्छी लगती थी?" लेकिन पहली बात यह है कि तब लोगों को यह सब पता नही था, वे सब बातो पर विश्वास करते थे। दूसरे, उसकी कहा-नियां पढ़कर स्वयं भी दूर देशों की यात्रा करने की इच्छा होती थी ..

प्राचीन रूस में दूर देशों का वर्णन करनेवाली और पृथ्वी के रूप-आकार के बारे में बतानेवाली बहुत सी पुस्तकें थी। एक का नाम था "गूढ़ पुस्तक", – लिखनेवाला शायद यह कहना चाहता था कि इसमें गूढ़ बातें हैं। इस पुस्तक ने दवीद नाम का एक मनीषी यह कहता है कि ह्वेल मच्छ अपनी पीठ पर धरती माता को संभाले हुए है, और जब भी "ह्वेल मच्छ हिलता-डुलता है, धरती माता कांप उठती है।"

मध्य युग में अरब लोग ही सबसे अधिक साहसी यात्री थे। सातवी सदी में अरबों ने विशाल भूक्षेत्र पर विजय पा ली और फिर व्यापार करने लगे, माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने लगे। अरब सौदागरों ने पूर्वी यूरोप की, स्लावों के इलाकों की और केंद्रीय एशिया के देशों की यात्रा की। भूमध्यरेखा से दक्षिण की ओर स्थित अफ़्रीका के आश्चर्यजनक देशों के बारे में सबसे पहले उन्ही ने बताया। उन्ही ने यूरोपवालों को अफ़्रीका के उष्ण कटिबंधीय देशो मे और मडागास्कर द्वीप मे परिचित कराया।
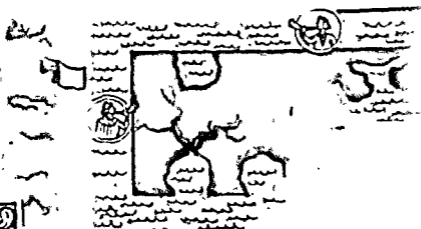
नौवी सदी मे इब्न होर्दाबेह ने अपने समय का सारा भौगोलिक ज्ञान संकलित किया। उसकी पुस्तक का नाम था "पथों और राज्यों की पुस्तक"। खुद तो उसने बहुत यात्राएं नही की। लेकिन वह बगदाद के खलीफ़ा का दरबारी था, सो अरब सौदागर, अधिकारी और यात्री दरबार मे जो कुछ बताते थे वह सारी जानकारी वह जमा कर सकता था।

इसके कुछ समय बाद इब्न रुस्ता ने एक पुस्तक लिखी। उसने अपनी आंखों जो कुछ देखा था, उसके बारे में लिखा और अपनी पुस्तक का नाम "जवाहिरातो की किताब" रखा। इस हस्तलिखित ग्रथ का अंतिम, सातवा भाग ही बचा रहा है, जिसमें पूर्वी यूरोप मे रहनेवालों के बारे मे बहुत कुछ बताया गया है। इब्न रुस्ता ने स्लावो और कीयेव रूस के बारे में भी बताया है, जिनके बारे मे पश्चिमी यूरोप और पश्चिमी एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया के लोग बहुत कम जानते थे।

दसवी सदी में इब्न फ़दलान ने अपनी पुस्तक "वोल्गा की यात्रा" में पूर्वी यूरोप के निवासियों के बारे मे और अधिक जानकारी दी।

बगदाद में जन्मे मसूदी ने निकट और मध्य पूर्व, मध्य एशिया, कोहकाफ़ (*काकेशिया*) और पूर्वी यूरोप की यात्रा की। कारवां के साथ उसने पूर्वी अफ्रीका का सारा दक्षिणी भाग देखा, चीन और जावा की उसे अच्छी जानकारी थी। उसकी एक पुस्तक का नाम है "सोने के मैदान, हीरों के फूल" और दूसरी का नाम है "सूचनाएं और प्रेक्षण"।

मध्य युग के ऐसे अनेक यात्रियो के नाम मैं गिना सकता हूं, जो हमारे लिए अपनी अनमोल रचनाए छोड़ गये हैं, जैसे कि अपने जमाने का सबसे बड़ा विद्वान, ख्वारज्म का अबू-रेहन मुहम्मद अल बरूनी या सभी युगों का महानतम यात्री इब्न बत्तूत जिसने पच्चीस वर्ष की अपनी यात्राओं मे कम से कम सवा लाख किलोमीटर की दूरी तय की। लेकिन ये मुस्लिम यात्री और विद्वान भी पृथ्वी को सपाट ही समझते थे, हां वे ईसाइयों की तरह इसे चौकोर नही, बल्कि गोल बताते थे और ऐसी ही इसे अपने मानचित्रों मे दिखाते थे। इनमें से एक के बारे में मैं तुम्हें आगे चलकर बताऊंगा।
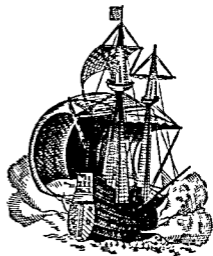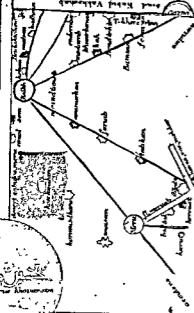
अध्याय चार
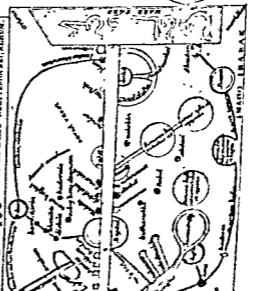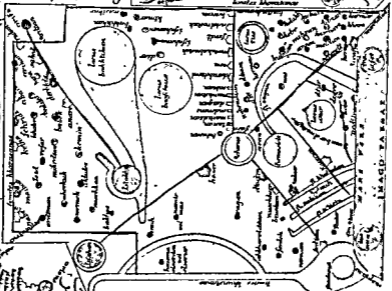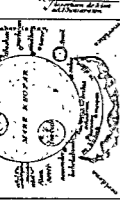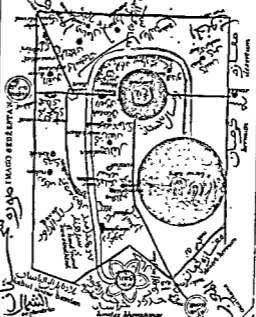
बारहवीं सदी का मानचित्र।

बहुत पुराने जमाने मे ही लोगों को अपने आस-पास के इलाके का खाका बनाना आता था। इसके बिना वे दूसरों को कैसे यह समझा सकते थे कि कहां शिकार अच्छा मिलता है और कहां कंद-मूल अधिक अच्छे होते हैं? फिर ये आदिम खाकानवीस अपने खाको मे आस-पड़ोस की बस्तियां दिखाने लगे, रेखाओं-मार्गों से उन्हें अपने बस्तियों से जोड़ने लगे। और जब दूर देशो को कारवां जाने लगे तब कारवां के रास्तों का नक्शा बनाना और वर्णन करना पडा।

छठी सदी ई० पू० में हुए प्राचीन यूनानी दार्शनिक अनाक्सिमंदर ने ऐसे बहुत से वर्णन जमा करके सारे संसार का एक खाका बनाने की कोशिश की। इस तरह पहला मानचित्र बना।

नये मानचित्र बनाने का काम अत्यत रोचक है। मैं जब छोटा था तो मुझे रहस्यमय निर्जन टापू बनाने का शौक था। ऐसा करते हुए मैं पहाड़ों मे कत्थई रंग भरता था, जैसे कि वे होते ही हैं। नदियां, झीलें और समुद्र नीले रग से बनाता था, जंगल और मैदान हरे रंग से। ऐसे टापुओं पर शानदार शिकार करने, सुंदर राजकुमारियों को बचाने और नागो द्वारा रक्षित खज़ाने खोजने में बड़ा मज़ा आता है।

फिर जब मैं बड़ा हुआ तो मुझे पता चला कि लोगों ने लिखना अभी नही सीखा था, लेकिन खाके बनाने लगे थे।

सोवियत संघ में काले सागर से थोड़ी दूर बेलया नदी के तट पर मायकोप नाम का एक शहर है। यह कोई बहुत पुराना नगर नही है, लगभग सौ साल पहले बना था। नगर से थोड़ी दूर एक टीला है, जिसे कभी लोगों ने मिट्टी डाल-डालकर बनाया था। लेकिन कब बनाया था और किसलिए बनाया था—यह बात सब भूल चुके हैं। एक बार पुरावेत्ताओं ने सोचा "चलो, इसे खोदकर देखते हैं। हो सकता है, यहा ऐसी चीज़े मिले, जिनसे यहा जो कुछ घटा था उसका इतिहास पता लगाने में मदद मिले।"

बस, वे काम में जुट गये। एक अभियान दल वहा भेजा गया और वह वहा खुदाई करने लगा। एक दिन खुदाई की—कुछ नही मिला। दो दिन, तीन दिन बीते—खदकों में से बस मिट्टी और पत्थर ही निकल रहे थे। पुरावेत्ता उदास हो गये। सोचने लगे कि बेकार ही इस काम मे हाथ डाला। पर तभी उन्हें खजाना मिला।

क्या कुछ नही था इस खज़ाने मे! कब्र के ऊपर सोने के पत्तरोंवाली छतरी बनी हुई थी। यह छतरी चांदी के चार स्तंभों पर टिकी हुई थी, जिनके निचले सिरों पर घुमावदार सींगोवाले वृषभों की आकृतियां थी। सोने-चांदी से बनी ये आकृतियां कितनी सुंदर थी! यहा पास ही सोने-चांदी के बर्तन और भांति-भांति के आभूषण मिले। सभी औज़ार और अस्त्र पत्थर और शुद्ध तांबे के थे। सचमुच ही लाजवाब खज़ाना था।

यह जरूर किसी विशाल और संपन्न कबीले के मुखिया की कब्र थी। पता नही वह अपनी मौत मरा था, या शत्रु के साथ मुठभेड में खेत रहा था। इतना पक्का है कि वह बहुत आदरणीय व्यक्ति था और कबीलेवालों ने बडे सम्मान के साथ उसे दफ़नाया।

लेकिन पुराविदो को सोना-चांदी पाकर इतनी खुशी नहीं हुई। सबसे बढ़िया खोज थी–ि
के कुछ बर्तन, जिन पर तरह-तरह के चित्र बने हुए थे।

इन कलशों में लोग कभी घी और मदिरा रखते थे। अज्ञात चित्रकारों ने इन कलशो
काकेशिया के पहाड़ बनाये, इन जगहो पर बहती नदी दिखायी। बस, सच्चे खाके बन
सो भी इतने ब्योरेवार कि इन पर जो स्थान इंगित थे, उन्हें पुराविदों ने तुरंत ही ढूंढ नि

लेकिन सबसे अधिक आश्चर्य पुराविदों को तब हुआ जब उन्होंने यह पता लगाया नि
चीजें कितनी पुरानी हैं। पता चला, पूरे चार हज़ार साल! उस ज़माने में यहां के मैदान
बसे कबीलों ने शायद लिपि का आविष्कार न किया हो, लेकिन नक्शे बनाने उन्हें आते

अभी कुछ साल पहले तुर्की में एक प्राचीन बस्ती की खुदाई करते हुए पुराविदों को मि
की पट्टिका पर खुदा नक्शा मिला है। विशेषज्ञों का कहना है कि यह पट्टिका नौ हज़ार स
पुरानी है। आज यह खाका-मानचित्र ससार में सबसे पुराना माना जाता है। कौन जाने, ि
ही है या नही। हो सकता है, इससे भी पुराने कही पर जमीन में दबे हुए हों? बस, हमें अ
मिले नही हैं।
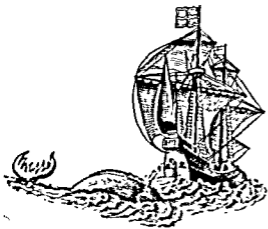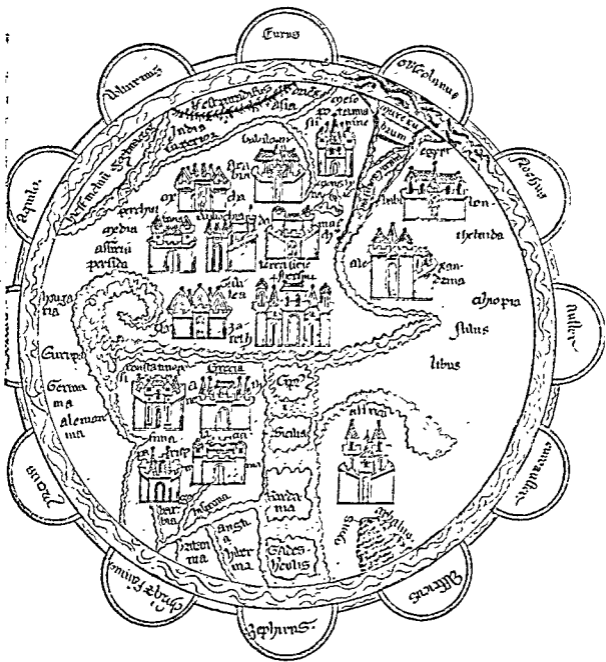
चौदहवीं सदी का मानचित्र।

भूमध्यसागर में स्थित सिसिली द्वीप के पालेर्मो शहर में अबु-अब्दल्ला मोहम्मद इब्न इदरीसी नाम का एक अरब विद्वान रहता था। वह अमीर बाप का बेटा था। वर्षों तक उसने पढ़ाई की थी और दूर-दूर की यात्राएं की थीं। एक बहुत बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में वह प्रसिद्ध हुआ।

सिसिली के राजा रोजर द्वितीय का दरबार पालेर्मो में ही था। उसका जन्म नोर्मेंडी में हुआ था, जो यूरोप के उत्तर-पश्चिम में है, लेकिन किस्मत उसे सिसिली में ले आयी। और वह यहीं रह गया। राजा रोजर को उत्तरी देशों का बड़ा अच्छा ज्ञान था, इस बात पर उसे गर्व था और भूगोल उसे बहुत अच्छा लगता था (ऐसा अक्सर होता है न, हम जिन काम में कुशल होते है, वही हमें ज़्यादा अच्छा लगता है?)।

राजा ने विद्वान भूगोलवेत्ता के बारे में सुना। लोगों का कहना था कि दक्षिणी देशों का जितना अच्छा ज्ञान उनको है उतना और किसी को नहीं। राजा ने इब्न इदरीसी को दरबार में बुलवाया और यह सुझाव रखा कि वे दोनों मिलकर एक मानचित्र बनायें। राजा को उत्तरी देशों का अच्छा ज्ञान था और अरब भूगोलवेत्ता को दक्षिणी देशों का। सो वे दोनों मिलकर उस सारे संसार का जहां लोग बसे हुए है, सबसे बड़ा, सबसे अधिक विस्तृत और सबसे अधिक सही मानचित्र बना सकते हैं।

विचार और ज्ञान आश्चर्यजनक वस्तुएं है। ये ऐसी चीज़ें है, जिन्हें चाहे जितना ख़र्च करो ये कभी खत्म नहीं होतीं। एक पुरानी सूक्ति है: यदि तुम्हारे पास एक सेब है और मेरे पास एक सेब है, और हम दोनों अपने सेबों की अदला-बदली कर लें, तो दोनों के पास एक-एक सेब ही रहेगा। लेकिन यदि तुम्हारे पास भी और मेरे पास भी ज्ञान और विचार है, और हम उनका विनिमय कर लें, तो दोनों का ज्ञान पहले से दुगना हो जायेगा।

इब्न इदरीसी राजा के साथ काम करने को तैयार था। वे दोनों मिलकर मानचित्र को अधिक पूर्ण और सच्चा बना देंगे।

तब राजा ने पूछा कि इतने परिश्रम से बनाये जानेवाले मानचित्र के लिए कौन सी सामग्री ली जाये? उसे लगता था

कि कागज़ ऐसे नक्शे के लिए बहुत ही मामूली चीज़ है और फिर वह समय के साथ पुराना पड़कर खराब हो जायेगा। अरब विद्वान ने इस बात का क्या जवाब दिया, यह तो हम नही जानते। हा, इतना पता है कि राजा ने अपने खजाने से सारी चादी निकालने का हुक्म दिया और कहा कि इसे गलाकर जितनी बडी गोल प्लेट बन सकती है, बना डालो (तुम्हे याद है न कि अरब भूगोलवेत्ता पृथ्वी को सपाट किंतु गोल मानते थे, जैसे कि सैनिक की ढाल ?)। बस, इस पर शानदार मानचित्र अंकित हो।

राजा की बात कौन टाल सकता है ? बस, कारीगर काम मे जुट गये। आखिर चार आदमी चांदी की भारी ढाल बड़ी मुश्किल से उठाकर अरब भूगोलवेत्ता के कमरे मे ले आये। उस दिन से शुरू करके पूरे पद्रह साल तक अबू अब्दल्ला मोहम्मद इब्न इदरीसी इस अमूल्य ढाल पर उन सब देशों की रूप-रेखा बनाता रहा जिन्हे राजा रोजर और वह स्वय जानता था।

यह नक्शा पूरा होने से पहले ही राजा का देहात हो गया। लेकिन अरब भूगोलवेत्ता ने अपना काम पूरा करके ही छोडा। जैसा कि राजा के साथ मिलकर उन्होने सोचा था वैसा ही मानचित्र बना। चादी के विशाल पट्ट पर विभिन्न देश, समुद्र और नदिया, पहाड और रेगिस्तान अंकित थे। एक लंबे कागज़ पर सब कुछ समझाया गया था कि मानचित्र मे क्या-क्या दिखाया गया है।

राजा और भूगोलवेत्ता से बस एक ही गलती हुई। चांदी बहुत ही कम टिकाऊ सामग्री सिद्ध हुई ! शीघ्र ही राजा के उत्तराधिकारियो को धन की आवश्यकता हुई और चादी का मानचित्र गायब हो गया। इब्न इदरीसी ने मामूली कागज़ पर उसकी नकले न उतारी होती तो हमे उसके बारे मे कुछ पता ही न चलता। कागज पर बने ये मानचित्र बरसो तक लोगो के काम आते रहे और कुछ तो अब तक बचे रहे है। तो, सोचो ज़रा, क्या चीज ज्यादा टिकाऊ है – चादी या मामूली कागज ?

अरब भूगोलवेत्ता के मानचित्र पर बारहवी सदी के मध्य तक प्राप्त सारी भौगोलिक जानकारी अंकित है। हां, यह सच है कि लोगो को तब पृथ्वी का पर्याप्त ज्ञान नही था, और जो वे नही जानते थे, वह अपने मन से गढ लेते थे। इसलिए इब्न इदरीसी और रोजर द्वितीय के मानचित्र पर कुछ ऐसा भी देखा जा सकता है, जो न कभी था, न है। लेकिन यह आज के ज्ञान की दृष्टि से गलती है, आज से आठ सौ साल पहले कोई यह नही कह सकता था कि इस मानचित्र मे कोई गलती है।

अरब भूगोलवेत्ता का चांदी का मानचित्र

भूमध्यसागर में स्थित सिसिली द्वीप के पालेर्मो नगर में अबू-अब्दल्ला मोहम्मद इब्न इदरीसी नाम का एक अरब विद्वान रहता था। वह अमीर बाप का बेटा था। वर्षों तक उसने [illegible] की थी और दूर-दूर की यात्राएं की थी। एक बहुत बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में वह प्रसिद्ध हुआ।

सिसिली के राजा रोजर द्वितीय का दरबार पालेर्मो में ही था। उसका जन्म नोर्मंडी में हुआ था, जो यूरोप के उत्तर-पश्चिम में है, लेकिन किस्मत उसे सिसिली में ले आयी। और वह यहीं रह गया। राजा रोजर को उत्तरी देशों का बड़ा अच्छा ज्ञान था, इस बात पर उसे गर्व था और भूगोल उसे बहुत अच्छा लगता था (ऐसा अक्सर होता है न, हम जिस काम में कुशल होते हैं, वही हमें ज्यादा अच्छा लगता है?)।

राजा ने विद्वान भूगोलवेत्ता के बारे में सुना। लोगों का कहना था कि दक्षिणी देशों का जितना अच्छा ज्ञान उसे है उतना और किसी को नहीं। राजा ने इब्न इदरीसी को दरबार में बुलवाया और यह सुझाव रखा कि वे दोनों मिलकर एक मानचित्र बनायें। राजा को उत्तरी देशों का अच्छा ज्ञान था और अरब भूगोलवेत्ता को दक्षिणी देशों का। सो वे दोनों मिलकर उस सारे संसार का जहां लोग बसे हुए हैं, सबसे बड़ा, सबसे अधिक विस्तृत और सबसे अधिक सही मानचित्र बना सकते हैं।

विचार और ज्ञान आश्चर्यजनक वस्तुएं हैं। ये ऐसी चीजें हैं, जिन्हें चाहे जितना खर्च करो ये कभी खत्म नहीं होतीं। एक पुरानी सूक्ति है: यदि तुम्हारे पास एक सेब है और मेरे पास एक सेब है, और हम दोनों अपने सेबों की अदला-बदली कर लें, तो दोनों के पास एक-एक सेब ही रहेगा। लेकिन यदि तुम्हारे पास भी और मेरे पास भी ज्ञान और विचार है, और हम उनका विनिमय कर लें, तो दोनों का ज्ञान पहले से दुगना हो जायेगा।

इब्न इदरीसी राजा के साथ काम करने को तैयार था। वे दोनों मिलकर मानचित्र को अधिक पूर्ण और सही बना देंगे।

तब राजा ने पूछा कि इतने परिश्रम से बनाये जानेवाले मानचित्र के लिए कौन सी सामग्री ली जाये? [illegible]

कि कागज ऐसे नक्शे के लिए बहुत ही मामूली चीज़ है और फिर वह समय के साथ पुराना पड़कर खराब हो जायेगा। अरब विद्वान ने इस बात का क्या जवाब दिया, यह तो हम नही जानते। हा, इतना पता है कि राजा ने अपने खज़ाने से सारी चादी निकालने का हुक्म दिया और कहा कि इसे गलाकर जितनी बडी गोल प्लेट बन सकती है, बना डालो (तुम्हें याद है न कि अरब भूगोलवेत्ता पृथ्वी को सपाट किंतु गोल मानते थे, जैसे कि सैनिक की ढाल?)। बस, इस पर शानदार मानचित्र अंकित हो।

राजा की बात कौन टाल सकता है? बस, कारीगर काम मे जुट गये। आखिर चार आदमी चांदी की भारी ढाल बडी मुश्किल से उठाकर अरब भूगोलवेत्ता के कमरे मे ले आये। उस दिन से शुरू करके पूरे पद्रह साल तक अबू अब्दल्ला मोहम्मद इब्न इदरीसी इस अमूल्य ढाल पर उन सब देशों की रूप-रेखा बनाता रहा जिन्हे राजा रोजर और वह स्वय जानता था।

यह नक्शा पूरा होने से पहले ही राजा का देहात हो गया। लेकिन अरब भूगोलवेत्ता ने अपना काम पूरा करके ही छोडा। जैसा कि राजा के साथ मिलकर उन्होने सोचा था वैसा ही मानचित्र बना। चादी के विशाल पट्ट पर विभिन्न देश, समुद्र और नदिया, पहाड और रेगिस्तान अंकित थे। एक लंबे कागज पर सब कुछ समझाया गया था कि मानचित्र मे क्या-क्या दिखाया गया है।

राजा और भूगोलवेत्ता से बस एक ही गलती हुई। चादी बहुत ही कम टिकाऊ सामग्री सिद्ध हुई! शीघ्र ही राजा के उत्तराधिकारियो को धन की आवश्यकता हुई और चादी का मानचित्र गायब हो गया। इब्न इदरीसी ने मामूली कागज पर उसकी नकले न उतारी होती तो हमे उसके बारे मे कुछ पता ही न चलता। कागज पर बने ये मानचित्र बरसो तक लोगों के काम आते रहे और कुछ तो अब तक बचे रहे है। तो, सोचो जरा, क्या चीज ज्यादा टिकाऊ है – चांदी या मामूली कागज?

अरब भूगोलवेत्ता के मानचित्र पर बारहवी सदी के मध्य तक प्राप्त सारी भौगोलिक जानकारी अंकित है। हां, यह सच है कि लोगों को तब पृथ्वी का पर्याप्त ज्ञान नही था, और जो वे नही जानते थे, वह अपने मन से गढ लेते थे। इसलिए इब्न इदरीसी और रोजर द्वितीय के मानचित्र पर कुछ ऐसा भी देखा जा सकता है, जो न कभी था, न है। लेकिन यह आज के ज्ञान की दृष्टि से गलती है, आज से आठ सौ साल पहले कोई यह नही कह सकता था कि इस मानचित्र में कोई गलती है।

कहना न होगा कि जो कही आता-जाता नही उसके मन मे कोई सवाल भी नही उठते। वह या तो किसी भी बात का विश्वास नही करता और सारे संसार को उस स्थान जैसा ही समझता है, जहां वह स्वयं रहता है, या सभी बातों पर, बिल्कुल बेसिरपैर की बातों पर भी विश्वास करता है।

इस पन्ने पर बना मानचित्र देखो। यह मानचित्र मठवासियों ने खास तौर पर घर-घुस्सुओं के लिए बनाया था, उन लोगों के लिए, जिन्हें यात्राओं का कोई शौक नही था, जिन्हें घर बैठकर खाना-पीना ही अच्छा लगता था और वे मनगढ़ंत बातें सुनना, जो परदेस से लौटे गपोड़शंख और शेखचिल्ली अपने किस्सों मे जोड़ते थे।

ऐसे घर-घुस्सुओं के लिए ही मठवासियों ने तरह-तरह

की कपोल-कल्पनाएं एकत्रित करके यह मानचित्र बनाया, जिसे देखकर साहसी व्यक्ति भी सोचने लगेगा कि लंबे सफर पर निकले या नहीं।

यह देखो, एक टांगवाला आदमी बना हुआ है। तुम सोचते हो अपाहिज है? हरगिज़ नहीं। यह तो किसी यात्री ने मठवासियों के सामने ऐसी गप हांकी होगी कि दूर देश भारत में एक टांगवाले लोगों का पूरा कबीला रहता है। वे बहुत तेज़ दौड़ते है और जब बारिश होती है तो अपना पंजा ऊपर उठाकर उससे छतरी का काम लेते है।

इन गपोड़शंखों ने ही ये किस्से भी गढ़े कि वहां भारत मे ही कुत्तों के सिरवाले और घोड़ों की टांगोंवाले लोग रहते है और ऐसे अभागे लोग भी जिनके मुह ही नही होता। महान गंगा के किनारे घूमते हुए वे बस सुगंधो से ही पेट भरते है, और

जब उन्हें कहीं दूर जाना होता है तो अपने साथ बस एक जंगली सेब रख लेते हैं, जिसकी सुगंध देर तक बनी रहती है। अफ़्रीका में तो मठवासियों ने ऐसे लोग दिखाये जिनके सिर ही नहीं है। उनकी आंखें, नाक, कान छाती पर है!

मानचित्र पर भीमकाय लोग भी दिखाये गये हैं, जिनके कान इतने बड़े हैं कि कंबल का काम देते है। उधर एक आदमी धूप से बचने के लिए अपने निचले होंठ से चेहरा ढक रहा है—यह बड़े होंठवाले कबीले के लोग हैं।

पुराने किस्से-कहानियो के बौने, दैत्य, दानव, अजदहे और भयावह जीव — इन सबको ही मठवासियों ने इस मानचित्र पर बसा दिया है। इसकी बदौलत जो लोग लंबी यात्राएं पसंद नहीं करते थे वे सदा कह सकते थे कि दूर देशों मे ऐसे डरावने जीव हैं, इसलिए घर पर बैठे रहना ही अच्छा है।

मध्ययुग के पढ़े-लिखे लोगों के पास जो पुस्तकें आती थीं, उनमें समय-समय पर ऐसे दार्शनिकों की रचनाओं के अनुवाद भी होते थे, जो दैवी शक्ति के बिना प्रकृति की परिघटनाओं की व्याख्या करते थे। ज्यों-ज्यों समय बीतता जा रहा था, त्यों-त्यों लोग भांति-भांति की अधिकाधिक जानकारी पाते जा रहे थे। और इन निर्विवाद तथ्यों का सपाट पृथ्वी की कथा से कोई मेल नहीं बैठता था।

अंततः एक ऐसी घटना हुई, जिससे ढाल जैसी सपाट पृथ्वी की धारणा सदा के लिए बस कथा ही बन गयी और यह पूरी तरह सिद्ध हो गया कि हमारा ग्रह गोलाकार है। २० सितंबर १५१९ को अटलांटिक महासागर में गिरनेवाली ग्वादाल्क्वीवीरा नदी के मुहाने में स्थित सेविले बंदरगाह से पांच स्पेनी जहाजों ने प्रस्थान किया और कनारी द्वीप समूह से होते हुए पश्चिम दक्षिण को ब्राज़ील की ओर बढ़े। इस बेड़े के ध्वजवाहक पोत "ट्रिनिडाड" पर एडमिरल फ़ेर्नान मैगेलान का झंडा फहरा रहा था। उसने स्पेन के राजा को यह वचन दिया था कि वह पूरब में स्थित "मसालों के द्वीपों" तक पश्चिम के रास्ते से पहुंचेगा।

तीन साल बाद ६ सितंबर १५२२ को बेड़े में से बचा एकमात्र जहाज़ "विक्टोरिया" कप्तान सेबास्टियन डेल कानो की कमान में पृथ्वी का चक्कर लगाकर सेविले बंदरगाह में वापस पहुंचा। इस प्रकार मानवजाति के इतिहास में पहली बार संसार की परिक्रमा हुई और यह सिद्ध हो गया कि पृथ्वी एक गोला है।

जब तक व्यापारी अंतःस्थलीय सागरो की यात्रा करते थे या तट से अधिक दूर नही जाते थे, तब तक जलपोतो के कप्तानों को इस बात की चिंता करने की कोई आवश्यकता नही थी कि पृथ्वी का रूप कैसा है। लेकिन अपने देश के तट से जितनी दूर जाते, उतनी ही अधिक गलतिया उन्हे पुराने मानचित्रों मे ठीक करनी पडती, उन मानचित्रो मे, जो पृथ्वी के रूप को ध्यान मे रखे बिना बनाये जाते थे।

पंद्रहवी सदी में महान भौगोलिक खोजो का युग शुरू हुआ। पालदार जहाज महासागरों को लांघने निकले। ये कल्पनातीत साहस के कार्य थे। अभी तुम समझोगे कि ऐसा क्यों है।

आज सभी देशो के स्कूल छात्र यह जानते है कि पृथ्वी पर किसी भी स्थान की स्थिति भौगोलिक सूचकाको – अक्षाश यानी समानातर और रेखांश यानी देशातर – मे व्यक्त की जा सकती है। अक्षाश का अर्थ है भूमध्यरेखा से दूरी,

अगर तुम शतरंज खेलते हो तो तुम्हारा ध्यान इस बात की ओर गया होगा कि जहाज़ चलाने का यह तरीका शतरंज के घोड़े की चाल जैसा है। समुद्र मे जहाज़ ले जाने के लिए कोई बहुत उपयुक्त तरीका नही है यह, है न?

ऐसे नौचालन की अविश्वसनीयता को देखते हुए बहुत से देशो की सरकारो ने विशेष समितिया बनायी, खुले समुद्र में रेखांश का पता लगाने की अच्छी विधि सुझानेवाले को बडे-बडे इनाम देने की घोषणा की। लेकिन कोई बात नही बनी। वैज्ञानिको ने जो तरीके सुझाये वे या तो बहुत ही जटिल थे, या बहुत सही परिणाम नही देते थे।

कालमापी, अर्थात जहाज़ पर लगी ऐसी घडी जो सारी यात्रा के समय शून्य याम्योत्तर का समय दिखाती है, बनाये जाने के बाद ही यह समस्या हल की जा सकी। तब "शून्य" समय और "स्थानीय" समय के अंतर से कप्तान रेखाश निर्धारित करने लगे। "स्थानीय" समय का, कम से कम दोपहर को, पता लगाना तो लोगों ने न जाने कब से सीख रखा है।

अक्षांशों और रेखाशों का पता लगाना सीखने के बाद अब एक और भी बडी समस्या आती है। पृथ्वी के गोल धरातल के चित्र को समतल पर कैसे उतारा जाये। कागज पर पृथ्वी का सही मानचित्र कैसे बनाया जाये?

एक गुब्बारा लेकर मेज पर फैलाने की कोशिश करो। फैलाना इस तरह है कि उसके सभी बिंदु मेज़ के तल से सटे हो। शीघ्र ही तुम देखोगे कि ऐसा तभी किया जा सकता है, जबकि गोल गुब्बारे को पट्टियों मे काट दिया जाये। ये पट्टिया जितनी कम चौडी होंगी, उतनी ही अच्छी तरह ये मेज़ पर बिछेंगी।

लेकिन सेवइयों की तरह कटा मानचित्र किसे चाहिए? इससे काम कैसे लिया जाये? वैसे, हम तुम्हें बता दें कि ऐसे मानचित्र बनाये गये थे। इन्हें पतली-पतली पट्टियो पर, जो मानो ग्लोब से उतारी गयी हों बनाया जाता था। धरातल को चित्रित करने के दूसरे तरीके भी आज़माये गये। धीरे-धीरे भौगोलिक मानचित्र बनाने की कला ज्ञान की एक अत्यत रोचक शाखा बन गयी, जिसे मानचित्रकारी ही कहा जाता है। चूकि गोले के धरातल को समतल पर सही-सही चित्रित करना असंभव है, सो वैज्ञानिकों ने मानचित्रों के अलग-अलग प्रक्षेप यानी धरातल को अलग-अलग कोणों से दिखाने के तरीके सोच लिये है। कुछ प्रक्षेपो मे भूमध्यरेखा पर रेखाश सही-सही चित्रित करते है, लेकिन वहां से दूर होने के साथ-साथ वे विकृत होते जाते है। दूसरे प्रक्षेपो मे याम्योत्तर रेखाएं सही-सही रहती हैं, लेकिन महाद्वीपों की रूपरेखा और क्षेत्रफल बदल जाते है। तीसरे प्रक्षेपों में यह कोशिश की जाती है कि महाद्वीपो के क्षेत्रफल उनके वास्तविक क्षेत्रफलों के समनुरूप हों, इत्यादि, इत्यादि।

अध्याय पांच

मानचित्र से ग्लोब तक

वहुन पहले ईसवी सदी आरंभ होने से भी कोई डेढ
माल पहले प्राचीन यूनानी दार्शनिक क्रेटम ने एक गोले
रूप में पृथ्वी का नमूना बनाया। यह तो तुम समझ ही
ये होगे कि वह अरस्तू का अनुयायी और उसके शिष्यो
का शिष्य था। खेदवश यह नमूना बचा नही रहा। लेकिन
जिन लोगों ने उसे देखा था उनका कहना था कि क्रेटस
ने उम पर थल ही थल बनाया था, जिसके बीच एक दूसरे
को काटती नदियां, जिन्हें महासागर कहा जाता था,
बहती थी।

हा, आज इस नमूने को सच्चा ग्लोब तो नही कहा
जा मकता यानी पृथ्वी का ऐसा माडल जिस पर उन दिनो
लोगो को ज्ञात मभी महाद्वीप और महासागर अकित होते।
यह तो बस पृथ्वी का एक प्रतीक मात्र था। यो तो आगे
चलकर लोग फिर से पृथ्वी को सपाट समझने लगे, तो
भी रोम और वैजंतिया के मम्राटों ने क्रेटस के गोले को
ममार पर अपनी मत्ता का चिन्ह बनाया। रोमन सम्राटो
के इम गोले के ऊपर विजय देवी की मूर्ति बनी होती थी,
जबकि वैजंतिया के ईसाई इस के ऊपर सलीब लगाते थे।
तब मे यूरोप मे मभी राजाओं-महाराजाओ के राजचिन्हो
मे यह गोला अवश्य रखा जाने लगा। अब तो राजाओ के
ये गोले राष्ट्रीय मंग्रहालयों में कलाकृति और अमूल्य वस्तु
के रूप मे मरक्षित हैं, क्योकि अपने समय के सर्वश्रेष्ठ
कलाकारों ने इन्हें मोने मे बनाया और रत्नो से जडा
था।

पहला मच्चा ग्लोब यूरोप मे पंद्रहवी मदी मे बना।
एक बार प्राचीन जर्मन नगर नूरेनवर्ग मे, यहा के कपडा
व्यापारी का बेटा मार्टिन बेहाइम अपने मां-बाप से मिलने
आया। माता-पिता को इम बात का बहुत दुख था कि बेटे
ने पिता का व्यवमाय नही अपनाया। इत्मीनान मे दुकान
पर बैठने के बजाय मार्टिन. जहाजों मे धक्के खाता
फिरा। गणित का अध्ययन करके वह अनुभवी जहाजी
बन गया और पुर्तगाल के राजा जुआन द्वितीय के यहा नौकरी
करने लगा। धीरे-धीरे वह पुर्तगाल का प्रधान नौचालक

बहुत पहले ईसवी सदी आरंभ होने से भी कोई डेढ सौ साल पहले प्राचीन यूनानी दार्शनिक क्रेटस ने एक गोले के रूप में पृथ्वी का नमूना बनाया। यह तो तुम समझ ही गये होंगे कि वह अरस्तु का अनुयायी और उसके शिष्यों का शिष्य था। खेदवश यह नमूना बचा नहीं रहा। लेकिन जिन लोगों ने उसे देखा था उनका कहना था कि क्रेटस ने उस पर थल ही थल बनाया था, जिसके बीच एक दूसरे को काटती नदियां, जिन्हें महासागर कहा जाता था, बहती थी।

हां, आज इस नमूने को सच्चा ग्लोब तो नही कहा जा सकता यानी पृथ्वी का ऐसा माडल जिस पर उन दिनों लोगों को ज्ञात सभी महाद्वीप और महासागर अंकित होते। यह तो बस पृथ्वी का एक प्रतीक मात्र था। यों तो आगे चलकर लोग फिर से पृथ्वी को सपाट समझने लगे, तो भी रोम और बैजंतिया के सम्राटों ने क्रेटस के गोले को ससार पर अपनी सत्ता का चिन्ह बनाया। रोमन सम्राटों के इस गोले के ऊपर विजय देवी की मूर्ति बनी होती थी, जबकि बैजंतिया के ईसाई इस के ऊपर सलीब लगाते थे। तब से यूरोप में सभी राजाओं-महाराजाओं के राजचिन्हों में यह गोला अवश्य रखा जाने लगा। अब तो राजाओं के ये गोले राष्ट्रीय संग्रहालयों मे कलाकृति और अमूल्य वस्तु के रूप मे संरक्षित है, क्योंकि अपने समय के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों ने इन्हे सोने से बनाया और रत्नों से जड़ा था।

पहला सच्चा ग्लोब यूरोप मे पद्रहवी सदी मे बना। एक बार प्राचीन जर्मन नगर नूरेनबर्ग मे, यहा के कपड़ा व्यापारी का बेटा मार्टिन बेहाइम अपने मा-बाप से मिलने आया। माता-पिता को इस बात का बहुत दुख था कि बेटे ने पिता का व्यवसाय नही अपनाया। इत्मीनान से दुकान पर बैठने के बजाय मार्टिन जहाजो मे धक्के खाता फिरा। गणित का अध्ययन करके वह अनुभवी जहाजी बन गया और पुर्तगाल के राजा जुआन द्वितीय के यहां नौकरी करने लगा। धीरे-धीरे वह पुर्तगाल का प्रधान नौचालक

बन गया। राजा ने उसे अपना दरबारी बनाकर नाइट की उपाधि से विभूषित किया।

कुछ समय बाद इस नवधनाढ्य ने अपने शहर जाने और अपने सगे-संबधियों को यह दिखाने की सोची कि परदेस मे वह क्या से क्या बन गया है।

नूरनबेर्ग के गणमान्य नागरिक आश्चर्यचकित होकर मार्टिन की कहानियां सुनते थे, जो आधी दुनिया का चक्कर लगाकर आया था। उसका कहना था कि पृथ्वी एक गोला है। सुननेवालों ने तो कभी सोचा तक न था कि पृथ्वी गोल है। नगरवासी मार्टिन से अनुरोध करने लगे कि उसने जो कुछ देखा है उसका मानचित्र वह उनके लिए बना दे।

मार्टिन राजी हो गया। उसने एक फ़ुट आठ इंच व्यास का लकड़ी का एक गोला बनाने और उस पर पार्चमेंट चढ़ाने का आदेश दिया। फिर उसने जो कुछ देखा और सुना था उसके चित्र इस पर बना दिये और इन चित्रों के साथ इनका वर्णन भी लिख दिया। अच्छा तो यही होता कि वह ऐसा न करता! काली और लाल स्याही से ग्लोब पर ऐसी-

अनहोनी बातें लिखी हुई थीं कि कुछ समय बाद नूरेनबर्ग के निवासियों को इस उपहार पर गर्व होने के बजाय दूसरों को इसे दिखाते शर्म आने लगी। वे स्थान जिन्हें सब सभी जानते थे मार्टिन के ग्लोब पर बिल्कुल गलत अक्षांशों पर दिखाये गये थे। ऐसी गलतियां तो अब साधारण से साधारण मानचित्रों मे भी नही की जाती थी। दूर के देशों का तो उसने बिल्कुल ही बेतुका वर्णन किया था।

जरा सोचो कि जहां अमरीका है वहां मार्टिन ने पूरी द्वीप शृंखला बनायी और लिखा कि इन द्वीपों पर बहुत ही बड़े-बड़े लोग रहते हैं, कि वहां का एक आदमी चार-पांच आदमियो जैसे डील-डौल का होता है। ये लोग नंगे घूमते हैं। उनके कान बहुत लबे होते हैं, मुह चौडा, बड़ी-बड़ी डरावनी आंखें और बांहें दूसरे लोगों की बांहों से चारगुनी लंबी होती हैं।

मार्टिन की बात मानें तो जावा द्वीप पर दुमवाले लोग रहते हैं और जापान मे डरावने समुद्री जंतु और अजीबोगरीब मछलियां पायी जाती हैं।

इतना जरूर था कि मार्टिन का ग्लोब खूब रंग-बिरंगा था। हर देश मे सिंहासन पर राजा आसीन था, चारों ओर राजचिन्ह और ध्वज बने हुए थे। दक्षिणी गोलार्ध पर, जिसके बारे में तब यात्री प्रायः कुछ नही जानते थे, मार्टिन ने लिखा कि कैसे उसने यह ग्लोब बनाया था।

मार्टिन के बाद दूसरे देशों में भी कई ग्लोब बनाये गये। ये सब बहुत भारी-भरकम होते और महंगे पड़ते थे। बेशक, इन्हें यात्रा में अपने साथ नहीं ले जाया जा सकता था। हा, नाविको को नौचालन सिखाने के लिए बहुत अच्छे थे। सो, बहुत से कारीगरों ने पृथ्वी के नये-नये माडल बनाना जारी रखा। इनमें कुछ विचित्र भी थे। ऐसे ही एक ग्लोब के बारे में तुम्हें बताना चाहता हूं।
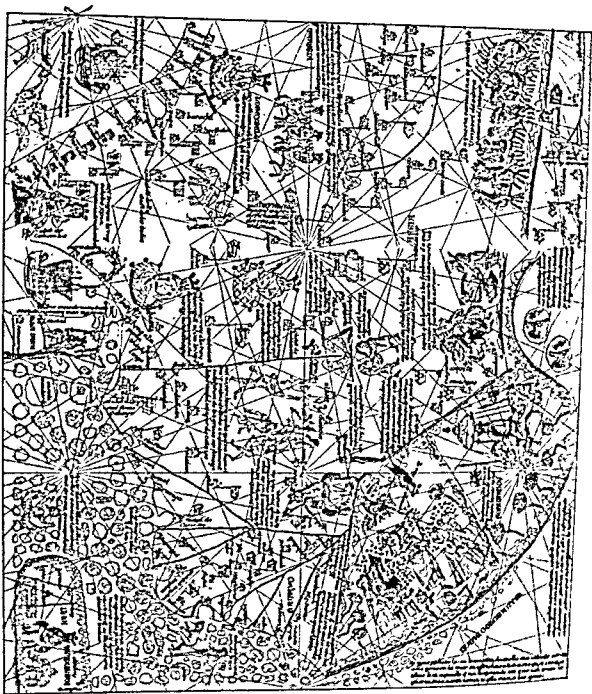
एक प्राचीन मानचित्र
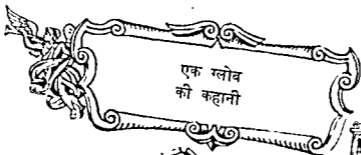
एक ग्लोब की कहानी

सोवियत नगर लेनिनग्राद में नेवा नदी के तट पर मीनारवाली एक पुरानी इमारत है। यह पहला रूसी संग्रहालय है, जिसे कूंस्टकमरा कहते है, कूंस्ट का अर्थ है शिल्प। यहां मीनार की पाचवी मंज़िल पर एक विशाल ग्लोब रखा हुआ है। उसकी कहानी ही मैं तुम्हें बताऊगा।

...१७१३ के पतझड़ की एक शाम को जर्मनी के गोट्टोर्प किले में खूब जगमग हुई। श्लेई नदी के बीचों-बीच एक टापू पर बना यह किला अजेय था लेकिन स्वीडन की फ़ौजें इस पर घेरा डाले हुए थी जिससे यहां का ड्यूक बहुत परेशान था। रूसी सेना ड्यूक की मदद को आयी और उन्होंने मिलकर स्वीडों को खदेड़ दिया। इसकी खुशी में बालक ड्यूक के रीजेंट ने दावत दी। इस चतुर अधिकारी ने पता लगा लिया कि रूसी सेना के अफ़सरों मे स्वयं ज़ार प्योत्र प्रथम भी है।

रीजेंट यह जानता था कि प्योत्र को भांति-भांति की विरली और विचित्र वस्तुओं का बहुत शौक है, सो वह किले के कमरों का चक्कर लगाना हुआ ड्यूक के संग्रह दिखा रहा था। ज़ार इन वस्तुओ को देखकर चकित तो हो रहा था, लेकिन बिना रुके चलता जा रहा था। एकाएक वह ठिठक गया। बहुत बड़े कमरे में झुटपुटा छाया हुआ था, कमरे के बीचोबीच तीन मीटर व्यास का विशाल ग्लोब रखा हुआ था। वह लकड़ी का बना हुआ था और उस पर कागज़ मढ़ा हुआ था। कागज़ पर अलग-अलग रगों
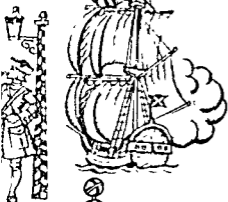
से वे सभी द्वीप और महाद्वीप बने हुए थे, जिनके बारे में यूरोपवासी तब जानते थे।

ज़ार ने तब दांतों तले उंगली दबा ली जब रीजेंट ने ग्लोब में बना एक छोटा-सा दरवाज़ा खोला और अतिथि को अंदर चलने को कहा। अंदर एक मेज़ थी, जिससे होकर ग्लोब की धुरी गयी थी। मेज़ के गिर्द बेंच थी। लाल बैंगनी रंग की दीवारों पर तांबे के सितारे जड़े हुए थे।

ज़ार को यह ग्लोब बहुत पसंद आया। रीजेंट के इशारे पर जब यह ग्लोब पृथ्वी की भांति धीरे-धीरे घूमने लगा तब तो प्योत्र की खुशी का ठिकाना न रहा। वह यह अजूबा हासिल करना चाहता था ताकि अपने देश में उसकी मदद से रूसी जहाज़ियों को नौचालन सिखाये। सो, तुम समझ ही सकते हो कि स्वीडन की नाकेबंदी से छुटकारा दिलाने के आभारस्वरूप जब कुछ दिन बाद ज़ार को यह ग्लोब भेंट मे मिला तो उसे कितनी खुशी हुई होगी।

अब इस जर्मन अजूबे की रूस की राजधानी सेंट पीटर्सबर्ग तक की लंबी और कठिन यात्रा शुरू हुई, जो पूरे चार साल में जाकर पूरी हुई। पहले ग्लोब को जहाज पर ले जाया गया, फिर विशाल स्लेज पर लदे ग्लोब को घोड़ों ने ढोया। घोड़ागाड़ी के लिए जंगल काटकर रास्ते बनाने पड़ते थे। घोड़ागाड़ी को दलदलों और खड्डों से बचकर आगे बढ़ना होता था। जब गोट्टोर्प का यह अजूबा आखिर राजधानी पहुंच गया तो इसके लिए खास तौर पर बनायी गयी एक इमारत में इसे रखा गया।

प्योत्र महान की मृत्यु के पश्चात ही इस ग्लोब को

कूंस्टकमरे की मीनार में रखा गया। बीस साल बाद कूंस्ट-कमरे में आग लगने से इसके संग्रह का बड़ा भाग जल गया। गोट्टोर्प ग्लोब भी आग से खराब हो गया। बहुत दिनों तक ऐसा कोई आदमी नही मिला जो इस अजूबे को नव-जीवन प्रदान करने पर राज़ी होता। आखिर तिरूतिन नाम के एक कारीगर ने जला हुआ ग्लोब ठीक करने का बीडा उठाया। अपने थोडे से सहायको के साथ मिलकर उसने ग्लोब का नया ढाचा बनाया, उसे घुमाने के यंत्र की मरम्मत करके उसे और भी अधिक अच्छा बनाया। उसने पीतल के दो छल्ले बनाये। उन्हे ग्लोब के गिर्द भूमध्यरेखा और याम्योत्तर रेखा की भाति लगाया। फिर चित्रकार ग्लोब पर काम करने लगे। उन्होंने भी ग्लोब मे बहुत कुछ बदला, क्योकि तब तक बीते सौ वर्षो मे पृथ्वी पर बहुत से नये स्थानो की खोज हुई थी, पहले से ज्ञात स्थानों के बारे मे नयी, अधिक सही जानकारी प्राप्त हुई थी।

अंदर से ग्लोब की दीवारों पर नीला रग किया गया। नक्षत्रो के प्रतीकात्मक चित्र बनाये गये और सुनहरी कीलो
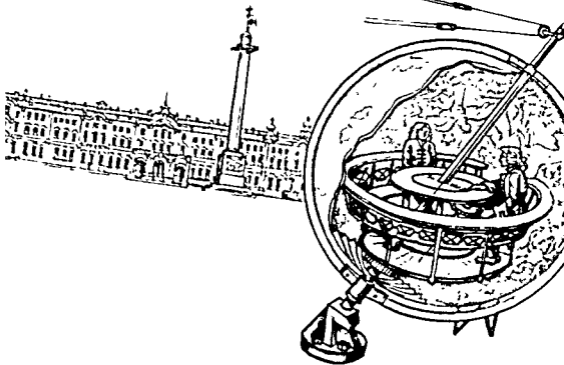
के रूप में तारे। अब तो यह ग्लोब पहले से भी कहीं अच्छा हो गया।

१९०१ में यह ग्लोब त्सारस्कोये सेलो नामक स्थान में ले जाकर रखा गया, अब यह स्थान पुश्किन नगर कहलाता है। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनों ने इस नगर पर कब्जा कर लिया। सोवियत सेनाओं ने जब पुश्किन नगर मुक्त कराया तो यहां न ग्लोब मिला, न उसके अवशेष। लंबी खोज के बाद जर्मन नगर लुबेक में यह ग्लोब मिला, जहां फ़ासिस्ट इसे उठाकर ले गये थे।

दो सौ साल पहले की ही भांति फिर से इस ग्लोब को जहाज़ पर लादा गया। अर्खांगेल्स्क बंदरगाह में इसे मालगाड़ी के खुले डिब्बे पर रखा गया और इस तरह ग्लोब लेनिनग्राद वापस लौटा।

१९४८ मे कूंस्टकमरे की मीनार की दीवार में छेद किया गया और क्रेन से ग्लोब को पाचवीं मंज़िल पर पहुंचाया गया, जहां इसे आज भी देखा जा सकता है।

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10 11 12
अध्याय
छह
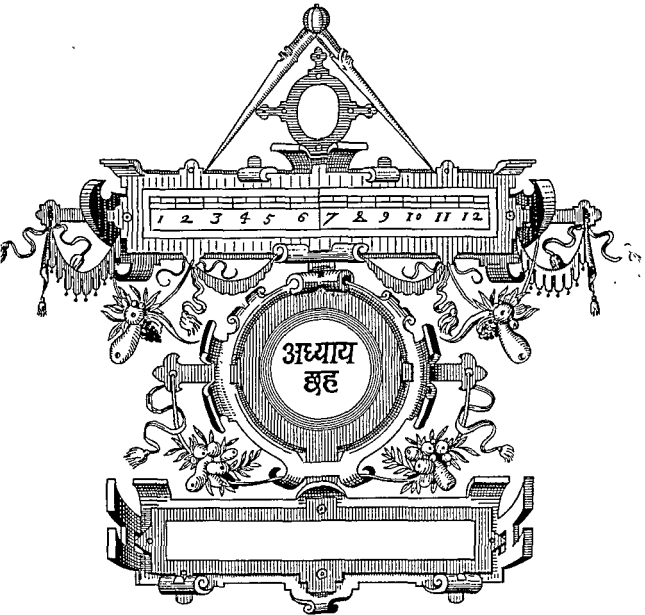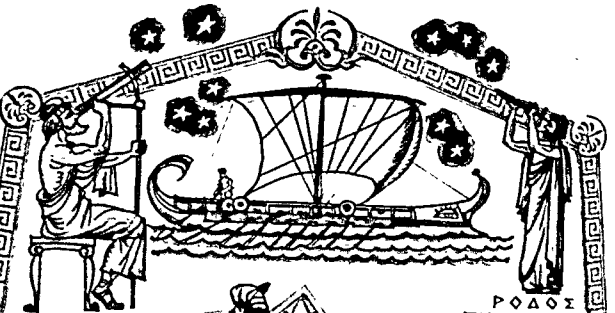
पुराने जमाने से ही लोग यह जानने को उत्सुक रहे है कि हमारी पृथ्वी का आकार क्या है और रूप कैसा है।

ऐरातोस्थेनस के बाद अनेक विद्वानों ने उसका प्रयास दोहराया। लेकिन सबके आंकड़े अलग-अलग निकले। प्राचीन यूनानी गणितज्ञ पोसिडोनियस ने यह पता लगाया कि रोड्स से सिकंदरिया तक पहुचने मे जहाजो को कितना समय लगता है। फिर उसने अगस्त्य तारे का उन्नतांश नाप कर पृथ्वी की परिधि की गणना की। लेकिन उसका परिणाम इतना सही नही था, जितना कि ऐरातोस्थेनस का था।

इसके लगभग एक हजार साल बाद नौवी सदी मे खलीफा अल-ममून ने अपने दरबार के विद्वानों को पृथ्वी मापने का काम सौंपा। इन विद्वानो ने मेसोपोटामिया में काम किया लेकिन इनकी गणनाए खो गयी हैं।

पृथ्वी का आकार पता लगाने के और भी प्रयास हुए।

सोलहवी सदी में फ़्रांस के एक डाक्टर ने अपनी बग्घी के पहिये मे पहिये के चक्कर गिनने का यत्र लगाया और पेरिस से अम्येन गया। अपने पथ के आरंभ और अंत मे उसने लकड़ी के तिकोनों से सूर्य का उन्नताश नापा और फिर पृथ्वी की परिधि की गणना थी। लेकिन ऊबड-खाबड़ रास्ते और उन्नतांश नापने की अनगढ़ विधि के कारण परिणाम सतोपजनक नही निकले। मापने का कोई दूसरा तरीका सोचना चाहिए था। ऐसा तरीका जिसमें जमीन का ऊंचा-नीचा होना बाधक न हो।

लगभग सौ साल बाद नीदरलैड के खगोलविज्ञानी और गणितज्ञ विलेब्रोड स्नैल ने ऐसी विधि सुझायी। इस विधि को उसने त्रिकोणीयन कहा। बड़ी कक्षाओं में जब तुम त्रिकोणमिति पढ़ोगे तो तुम्हें यह अवश्य सिखाया जायेगा कि त्रिभुज की मदद से ऐसी माप कैसे ली जाती है। यह बहुत दिलचस्प है।

अलग-अलग देशों में लंबाई की अलग-अलग नापें थीं। इससे भी वैज्ञानिकों के काम मे बहुत बाधा पडती थी। उदाहरण के लिए, फ़्रास में अठारहवी सदी के अंत तक लंबाई की नाप थी तुआज। एक तुआज छह फ़ुट के बराबर होता था।

उन्ही दिनों इंगलैड में लंबाई यार्डो (गज़ों) में नापी जाती थी। एक यार्ड में तीन फ़ुट होते थे। रूस में यह नाप थी साजेन, जो सात फ़ुट के बराबर थी।

छोटे-छोटे राज्यों में बंटे जर्मनी में फ़ुट की लंबाई भी हर राज्य मे अलग-अलग थी। इसके अलावा मील भी थे—इंगलैड का अपना मील, अमरीका का अपना, समुद्र में एक, और थल पर दूसरा।
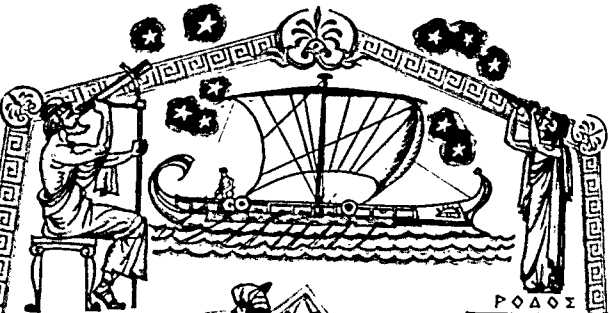
पृथ्वी सरधे जैसी है या सेब जैसी?

तुम्हें पता है कि सरधे और सेब मे क्या फर्क है? स्वाद मे नही, शक्ल में। सरधा दोनों सिरो की ओर लबूतरा-सा खरबूजा होता है और सेब दोनों सिरों पर कुछ-कुछ चपटा होता है। यों तो हर तरह के सरधे और सेब होते है, पर चलो, हम ऐसा ही मानेगे।

सत्रहवी सदी के उत्तरार्द्ध तक किसी को इस बात मे कोई संदेह नही था कि पृथ्वी एक आदर्श गोला है। लेकिन सहसा यह विश्वास डगमगा गया। हुआ यह कि पेरिस की विज्ञान अकादमी ने पृथ्वी के अलग-अलग बिंदुओ पर याम्योत्तर रेखा ी लंबाई नापकर यह निष्कर्ष निकाला कि पृथ्वी ध्रुवो की ोर ज़रा लंबोत्तरी-सी है, यानी इसका रूप सरधें जैसा है।

आइसक न्यूटन इस बात से सहमत नही थे। उनकी गणनाए ़ बताती थी कि पृथ्वी ध्रुवो पर लबोतरी नही चपटी होनी हिए। हालैड के वैज्ञानिक ख्रिस्तयान ह्यूगेन्स ने भी न्यूटन समर्थन किया। उनका कहना था कि यदि पृथ्वी अपनी पर घूमती है, तो वह ध्रुवो पर चपटी होनी चाहिए। इसका प्रमाण देने के लिए उन्होने निम्न प्रयोग दिखाया· एक डंडी पर गीली मिट्टी का बड़ा-सा थक्का लगाया और इस डंडी को जोरों से घुमाया। नरम मिट्टी का गोला शीघ्र ही सेब जैसी आकृति का हो जाता था।

वैज्ञानिकों में बहस होने लगी। फ्रांसीसी कहते थे "पृथ्वी ध्रुवो पर लंबोतरी है..." अंग्रेज़ कहते थे "चपटी है, चपटी है..." इस विवाद को हल करने के लिए नये अभियान दल भेजे गये, नये सिरे से याम्योत्तर नापे गये। नये कार्यों से यह प्रमाणित हुआ कि पृथ्वी वाकई ध्रुवो के पास ज़रा चपटी है, हालांकि यह चपटापन एक जैसा नही है।

पृथ्वी के रूप का सही-सही पता हमारे दिनो मे ही चला है। ४ अक्तूबर १९५७ को सोवियत सघ ने पहला कृत्रिम भू-उपग्रह छोड़ा। इस तरह अतरिक्ष के व्यावहारिक उपयोग का युग शुरू हुआ।

पहले प्रयास के बाद एक के बाद एक सोवियत राकेट छोड़े जाने लगे। उडान संचालन केंद्र मे नयी-नयी सूचना की बाढ आ गयी।

साल भर बाद अमरीका ने भी कृत्रिम भू-उपग्रह छोड़ा। दीर्घवृत्तीय कक्षाओं में उड़ते इन उपग्रहों का प्रेक्षण करते वैज्ञानिकों ने देखा कि उत्तरी गोलार्ध के ऊपर ये उपग्रह हल्की-सी "डुबकी" लगाते है, इनकी कक्षा नीची हो जाती है, मानो कोई चीज़ इन्हें अपनी ओर खीचती है, जबकि दक्षिणी गोलार्ध के ऊपर सब कुछ पूर्ववत रहता है। आखिर इसका कारण क्या है?

कम्प्यूटर दिन-रात गणनाएं कर रहे थे, उधर दोनों महाद्वीपों से नये-नये कृत्रिम भू-उपग्रह उड़ानें भर रहे थे और जानकारी जमा होती जा रही थी। अंततः उत्तर मिल ही गया! पृथ्वी के विपरीत पहलुओं पर, हिंद महासागर के क्षेत्र में और उत्तरी अमरीका के तट से थोड़ी दूर इन उपग्रहों ने काफ़ी बड़े उभारों के होने का पता चलाया। बरसों तक लिये जाते रहे मापों के बाद यह स्पष्ट हो गया कि पृथ्वी उत्तरी गोलार्ध में पृथ्वी ज़रा-सी लंबोतरी है, जबकि दक्षिणी गोलार्ध में ज़रा सी चपटी है और इस तरह एक नाशपाती जैसी है। बेशक यह नाशपाती वैसी चिकनी नहीं है जैसी तस्वीरों में बनायी जाती है, बल्कि ऊबड़-खाबड़ है।

लेकिन यह कहना तो बहुत अच्छा नही लगता कि पृथ्वी नाशपातीरूपी है। तो फिर क्या कहा जाये? सो वैज्ञानिकों ने यह तय किया कि पृथ्वी को भू-आभ कहेंगे। बस! इस नाम पर किसी को कोई आपत्ति नही हो सकती। भविष्य में पृथ्वी के रूप के बारे में कितनी भी सही जानकारी क्यों न पा ली जाये, रहेगी वह भू-आभ ही यानी पृथ्वीरूपी ही।
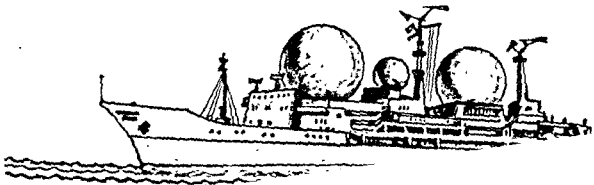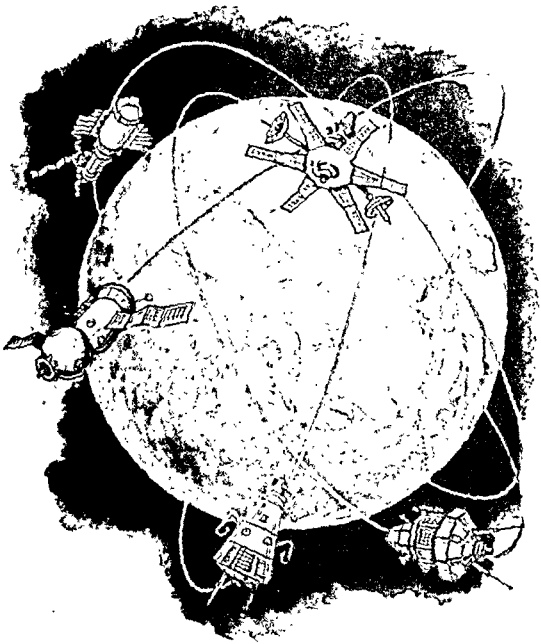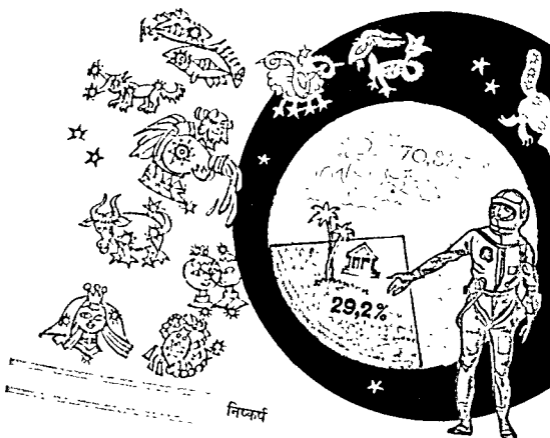
निष्कर्ष

आज पृथ्वी का ध्रुवीय अर्धव्यास ६३ ५६ ७८० मीटर के बराबर माना जाता है और भूमध्य-
खा पर इसका अर्धव्यास २१,३८० मीटर अधिक है। बेशक पृथ्वी जैसे "गोले" के अर्धव्यासों के
िये २१ किलोमीटर से ज़रा अधिक कोई बहुत बडी बात नही है। लेकिन इसकी वजह से भूमध्यरेखा
ी लंबाई (४,००,७५,१६० मीटर) पृथ्वी के याम्योत्तर वृत्त की परिधि से १,३४,३३४ मीटर
धिक है। १३४ किलोमीटर तो कम नही है।

आज हम पृथ्वी के आकार और रूप के बारे मे सभी प्रश्नो का काफी निश्चित उत्तर दे सकते
अब हम उस प्रश्न का भी उत्तर दे सकते हैं, जिसे लेकर प्राचीन भूगोलवेत्ताओं मे बहुत बहस
थी: "पृथ्वी पर थल अधिक है या जल?" जिन बच्चो को सही-सही जानकारी पाने का
है उन्हें मै यह बता सकता हूं कि पृथ्वी के सागरो-महासागरो का कुल क्षेत्रफल लगभग
करोड़ वर्ग किलोमीटर है। यह पृथ्वी के कुल क्षेत्रफल का ७०.८ प्रतिशत है। इसका अर्थ
थल के लिए केवल २९.२ प्रतिशत क्षेत्रफल बचता है।
, इस अपेक्षाकृत छोटे स्थल पर सारी मानवजाति बसी हुई है। अब मानव पर ही यह निर्भर
पृथ्वी फले-फूले, सो हमारा-तुम्हारा काम यह है कि हम अपनी पृथ्वी की रक्षा करें, उसे
ंवारें। इतना लंबा है पृथ्वी के रूप की खोज का इतिहास।

А. Томилин

КАК ЛЮДИ ИСКАЛИ ФОРМУ СВОЕЙ ЗЕМЛИ

на языке хинди

A. Tomilin

HOW PEOPLE DISCOVERED THE SHAPE OF THE EARTH

In Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

ISBN 5-05-000987-1

А. Томилин

КАК ЛЮДИ ИСКАЛИ ФОРМУ СВОЕЙ ЗЕМЛИ

на языке хинди

A. Tomilin

HOW PEOPLE DISCOVERED THE SHAPE OF THE EARTH

In Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

NOUVELLE
avec la representation des deux Emisphères Celestes, les
des Planetes. Dédiée à Messire BERTRAND RENÉ PALLU
MER DU SUD ou MER PACIFIQUE
89-25
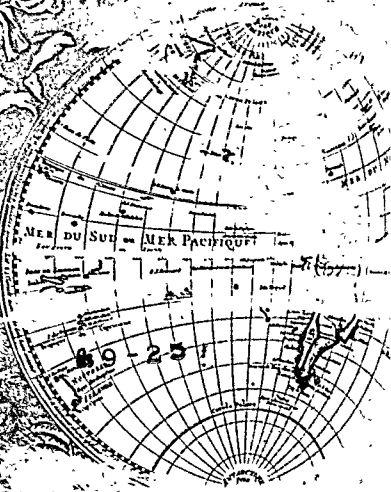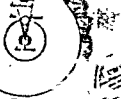
MAPPE-MONDE
du Soleil, et de la Lune, et les diferents sentiments sur le mouvem
BOREALE
SUD
INDES
Terres Australes
Ptolomee
Systeme de Descartes
de Lune
AUSTRALE
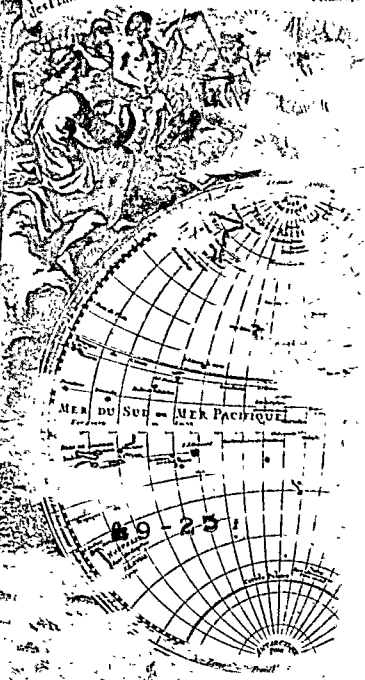
avec la representation des deux Emisferes Celestes, les
MER DU SUD — MER PACIFIQUE
89-25